“ब्रह्ममोक्कटे ग्रन्थमाला”

भक्त कनकदास

हिन्दी अनुवाद

प्रो. के. लीलावती

तेलुगु मूल

प्रो. जी. एस. मोहन

तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्
तिरुपति
2018

''ब्रह्ममोक्कटे ग्रन्थमाला''

भक्त कनकदास

हिन्दी अनुवाद

प्रो. के. लीलावती

तेलुगु मूल

प्रो. जी. एस. मोहन

तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्
तिरुपति
2018

BHAKTHA KANAKADAS

Hindi Translation
Prof. K. Leelavathy

Telugu Original
Prof. G. S. Mohan

T.T.D. Religious Publications Series No. 1282
©All Rights Reserved

First Edition - 2018

Copies : 1000

Published by
Sri Anil Kumar Singhal, I.A.S.,
Executive Officer,
Tirumala Tirupati Devasthanams,
Tirupati.

D.T.P:
Publications Division
T.T.D, Tirupati.

Printed at :
Tirumala Tirupati Devasthanams Press
Tirupati

प्राक्कथन

भारत के विविध प्रान्तों में, विभिन्न समयों में सभी कुल व जातियों में अनेक महान विभूतियाँ अवतरित हुईं। ऐसी महात्माओं ने अपनी समकालीन विविध परिस्थितियों से जूझते हुए सामाजिक प्रगति के लिए अथक परिश्रम किया था। इसके लिए उन्होंने जनता में सामाजिक चेतना के साथ - साथ आध्यात्मिक चेतना भी विकसित करने के लिए अपना तन-मन-धन लगाया था।

ऐसी महात्माओं की जीवनियों को, उनके द्वारा व्यक्त की गई जीवन की यथार्थताओं व आध्यात्मिक संदेशों को भक्तों तक, विशेषकर, भावी नागरिकों (बच्चों) तक पहुँचाने के लिए तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् ने 'ब्रह्ममोक्कटे' नामक शीर्षक के अन्तर्गत एक पुस्तक श्रृंखला को प्रारंभ किया है। तदनुरुप कुछ विद्वानों से ऐसी महान विभूतियों के जीवन चरितों का चित्रण करनेवाले ग्रंथ लिखवाकर प्रकाशित करने का संकल्प किया है।

इस क्रम में डॉ. के. लीलावती द्वारा अनूदित 'भक्त कनकदास' नामक पुस्तक आप तक हम पहुँचा रहे हैं। यह हमारी आकांक्षा है कि इस ग्रंथ के अध्ययन द्वारा बड़े और छोटे दोनों आध्यात्मिक चेतना से लाभान्वित हो जाएँगे।

सदा श्रीहरि की सेवा में,

कार्यनिर्वहणाधिकारी,
तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्,
तिरुपति

BHAKTHA KANAKADAS

Hindi Translation
Prof. K. Leelavathy

Telugu Original
Prof. G. S. Mohan

T.T.D. Religious Publications Series No. 1282
©All Rights Reserved

First Edition - 2018

Copies : 1000

Published by
Sri Anil Kumar Singhal, I.A.S.,
Executive Officer,
Tirumala Tirupati Devasthanams,
Tirupati.

D.T.P:
Publications Division
T.T.D, Tirupati.

Printed at :
Tirumala Tirupati Devasthanams Press
Tirupati

प्राक्कथन

भारत के विविध प्रान्तों में, विभिन्न समयों में सभी कुल व जातियों में अनेक महान विभूतियाँ अवतरित हुईं। ऐसी महात्माओं ने अपनी समकालीन विविध परिस्थितियों से जूझते हुए सामाजिक प्रगति के लिए अथक परिश्रम किया था। इसके लिए उन्होंने जनता में सामाजिक चेतना के साथ - साथ आध्यात्मिक चेतना भी विकसित करने के लिए अपना तन-मन-धन लगाया था।

ऐसी महात्माओं की जीवनियों को, उनके द्वारा व्यक्त की गई जीवन की यथार्थताओं व आध्यात्मिक संदेशों को भक्तों तक, विशेषकर, भावी नागरिकों (बच्चों) तक पहुँचाने के लिए तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् ने 'ब्रह्ममोक्कटे' नामक शीर्षक के अन्तर्गत एक पुस्तक श्रृंखला को प्रारंभ किया है। तदनुरुप कुछ विद्वानों से ऐसी महान विभूतियों के जीवन चरितों का चित्रण करनेवाले ग्रंथ लिखवाकर प्रकाशित करने का संकल्प किया है।

इस क्रम में डॉ. के. लीलावती द्वारा अनूदित 'भक्त कनकदास' नामक पुस्तक आप तक हम पहुँचा रहे हैं। यह हमारी आकांक्षा है कि इस ग्रंथ के अध्ययन द्वारा बड़े और छोटे दोनों आध्यात्मिक चेतना से लाभान्वित हो जाएँगे।

सदा श्रीहरि की सेवा में,

कार्यनिर्वहणाधिकारी,
तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्,
तिरुपति

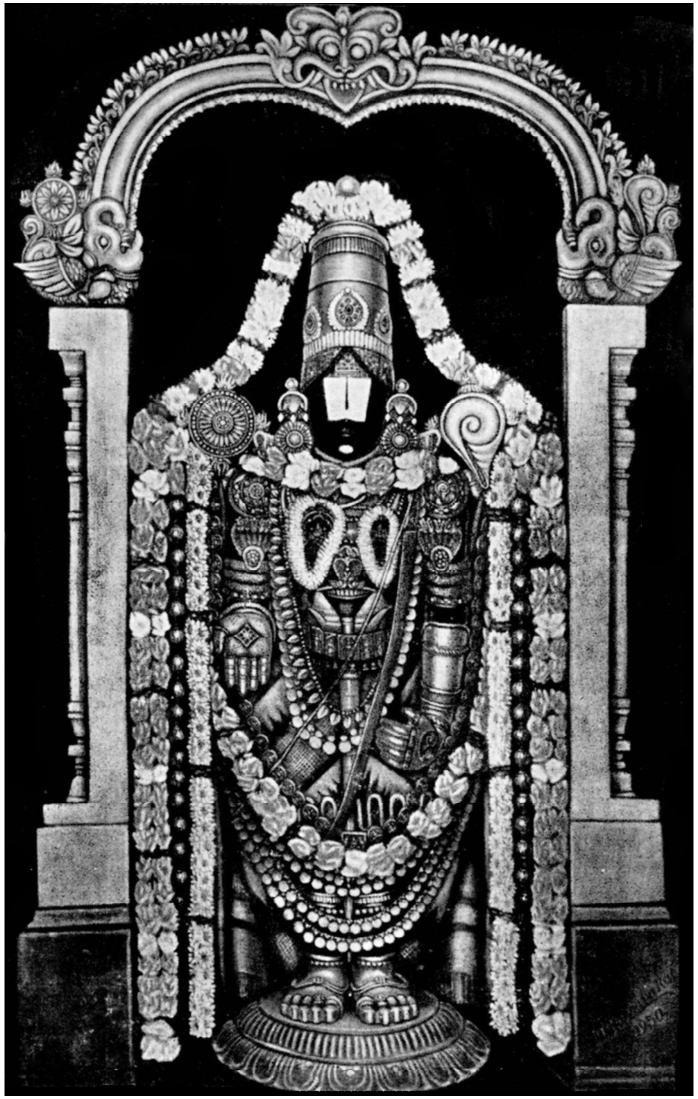

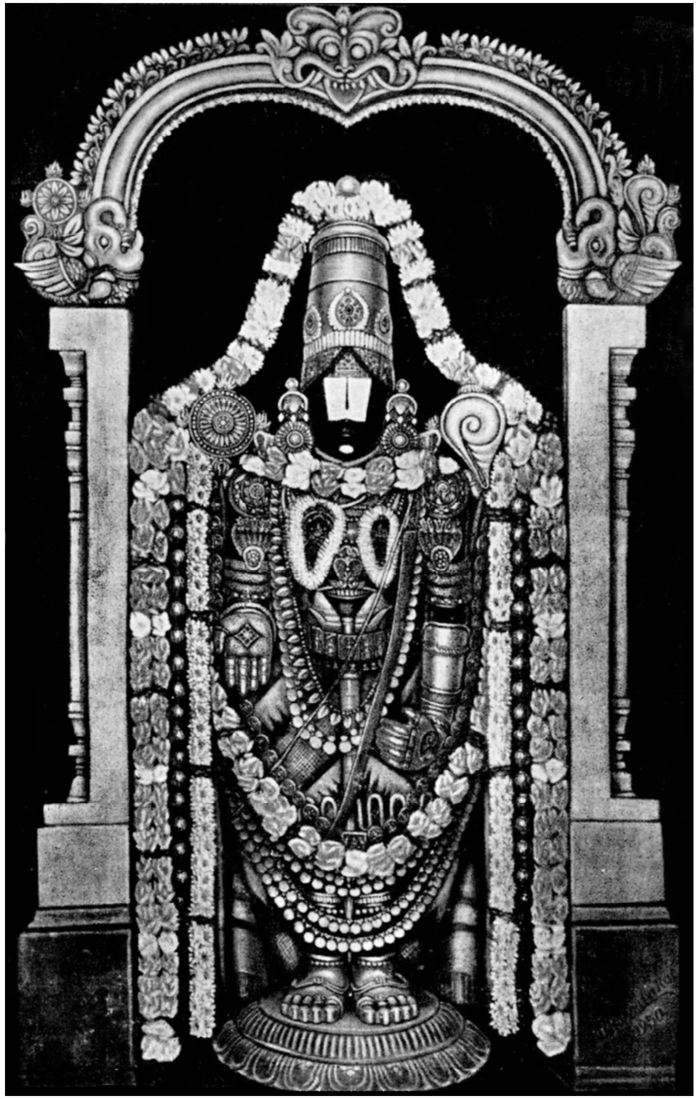

कन्नड में हरिदास साहित्य - एक परिचय

यह मत प्रचलन में है कि 12 वीं शताब्दी के 'शिव चरण के पद' ही कन्नड का सर्वप्रथम कीर्तन है। विभिन्न रंगमंचों में गाने के अनुकूल रहनेवाला गद्य साहित्य कन्नड हरिदास साहित्य के लिए स्फूर्तिदायक रहा है। कन्नड हरिदास के कीर्तन परंपरा में नरहरी तीर्थ जी को (13-14 शताब्दी) सर्वप्रथम कीर्तनकार माना जाता है। दास साहित्य में निहित प्रधान लक्षण पश्चात्ताप, शरणागति, एवं वैराग्य भाव हैं। ये सारे गुण उनके कीर्तनों में अभिव्यक्त हुए हैं।

संगीत और साहित्य, दोनों का आस्वादन करने वाले संकीर्तन कवि हैं कन्नड के हरिदास कवि। ब्रह्मनाद रूपी अनुभव प्राप्ति के लिए रस, राग, ताल बद्ध सहित नादोपासना आवश्यक हैं। इसके लिए वाग्गेयकारों द्वारा खोजे गये सर्वोत्तम साधनों में कीर्तन एक है। कीर्तन का अर्थ है स्तुति, वर्णन। नव विधा भक्ति में कीर्तन एक विद्या है। भगवान की स्तुति गान ही कीर्तन भक्ति है। इसी कारण कन्नड में कीर्तन के लिए 'देवरनामा' भी कहते हैं। कीर्तन में टेक, अनु टेक, लाक्षणिकता नामक त्रिधातु होते हैं।

वाग्गेयकार का अर्थ है 'वाक्य को गेय रूप में रखने वाले'। गीत के वचनों को 'मातुवु' भी कहा जाता है। संगीत से संबंधित गीत के लिए 'धातुवु' नाम दिया गया है। वाग्गेयकार के लिए वाक् शक्ति और गेय निर्माण की चतुरता आवश्यक गुण हैं।

कीर्तनों में नाम के छाप का रहना स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। अंकित नामों को गुरू द्वारा स्वीकार करने का एक विशिष्ट संप्रदाय हरिदासों में पाया जाता है। कन्नड के हरिदासों में ये सभी लक्षण दिखाई देते हैं।

कन्नड में हरिदास साहित्य - एक परिचय

यह मत प्रचलन में है कि 12 वीं शताब्दी के 'शिव चरण के पद' ही कन्नड का सर्वप्रथम कीर्तन है। विभिन्न रंगमंचों में गाने के अनुकूल रहनेवाला गद्य साहित्य कन्नड हरिदास साहित्य के लिए स्फूर्तिदायक रहा है। कन्नड हरिदास के कीर्तन परंपरा में नरहरी तीर्थ जी को (13-14 शताब्दी) सर्वप्रथम कीर्तनकार माना जाता है। दास साहित्य में निहित प्रधान लक्षण पश्चात्ताप, शरणागति, एवं वैराग्य भाव हैं। ये सारे गुण उनके कीर्तनों में अभिव्यक्त हुए हैं।

संगीत और साहित्य, दोनों का आस्वादन करने वाले संकीर्तन कवि हैं कन्नड के हरिदास कवि। ब्रह्मनाद रूपी अनुभव प्राप्ति के लिए रस, राग, ताल बद्ध सहित नादोपासना आवश्यक हैं। इसके लिए वाग्गेयकारों द्वारा खोजे गये सर्वोत्तम साधनों में कीर्तन एक है। कीर्तन का अर्थ है स्तुति, वर्णन। नव विधा भक्ति में कीर्तन एक विद्या है। भगवान की स्तुति गान ही कीर्तन भक्ति है। इसी कारण कन्नड में कीर्तन के लिए 'देवरनामा' भी कहते हैं। कीर्तन में टेक, अनु टेक, लाक्षणिकता नामक त्रिधातु होते हैं।

वाग्गेयकार का अर्थ है 'वाक्य को गेय रूप में रखने वाले'। गीत के वचनों को 'मातुवु' भी कहा जाता है। संगीत से संबंधित गीत के लिए 'धातुवु' नाम दिया गया है। वाग्गेयकार के लिए वाक् शक्ति और गेय निर्माण की चतुरता आवश्यक गुण हैं।

कीर्तनों में नाम के छाप का रहना स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। अंकित नामों को गुरू द्वारा स्वीकार करने का एक विशिष्ट संप्रदाय हरिदासों में पाया जाता है। कन्नड के हरिदासों में ये सभी लक्षण दिखाई देते हैं।

भारत देश के त्रिमत के आचार्यों में द्वैत सिद्धांत के बोधक श्रीमन्मध्वाचार्य हैं। उनकी शिष्य परंपरा ही कर्नाटक की हरिदास परंपरा है। मध्वाचार्य जी के विशिष्ट शिष्यों में नरहरितीर्थ, पद्मनाभ तीर्थ, माधवतीर्थ, अक्षेभ्यतीर्थ प्रमुख हैं। इनमें श्रीपादरायजु पद्मनाभ तीर्थ की पीढी के आठवें मठाधिपति हैं। वे अपने गुरू स्वर्णवर्णतीर्थ के हाथों तमिलनाडु के श्रीरंगपीठ पर आसीन हुए। उसके बाद कर्नाटक के कोलारू जिले के मुलबागिलु प्रांत को द्वैत सिद्धांत का केन्द्र बनाया। माध्व मत मठ के परिसर प्रांतों में संस्कृत भाषा का प्रभाव अत्यधिक रहा। बगल में स्थित तमिलनाडु के आळ्वार संत लोग तमिल में ही पाशुरों को रचकर गाते थे। इससे पहले ही भक्त शिवचरण भक्ति तत्वों को कन्नड में ही गाया करते थे। इन दोनों का प्रभाव लोगों पर देखकर श्रीपादराजु स्वयं अपने पूजा समय में छोटी स्तुति गीतों को कन्नड में रचकर गाया करते थे। वे गीत ही कन्नड हरिदास साहित्य में सर्वप्रथम कीर्तन के रूप में ख्याति पा चुके हैं। उनके पश्चात् उनके शिष्य, वादिराज, पुरंदरदास, कनकदास ने विजयनगर परिसर प्रांतों में कीर्तन संप्रदाय को आगे बढ़ाया। उसके बाद अर्थात् विजयनगर साम्राज्य की पतनावस्था के बाद भी काखंडकि के महीपतराय, उनके भाई विजयदास दोनों हरिदास साहित्य की परंपरा को आगे बढ़ाने में सफलीकृत हुए। इस प्रकार उस समय से लेकर आज तक शिष्य और प्रशिष्यों ने हजारों की संख्या में कीर्तन रचकर समाज को दिया, हरिदास साहित्य को पुनर्जीवित किया। मानव जीवन के तत्व को समाज को सौंपकर वे मार्गदर्शक बने।[1]

[1] हरिदास वाङ्मयम् (क) पीठिका, डॉ. टी. एन. नागरत्न

साधारणतः सभी हरिदास, मध्व मत के तत्वों को ही स्वीकृति दिया करते हैं। हरि सर्वोत्तम हैं। जगत सत्य है, जीव, ईश्वर, जड़ पदार्थ, उनके बीच का अंतर, ईश्वर - जीव इन दोनों के बीच स्थित बिंब - प्रतिबिंब स्वरूप आदि तत्वों में विश्वास रखने वाले हैं हरिदास। मध्व मत के अधिपति श्रीपाद व्यासराय, वादिराजु ने इसी विश्वास को अपने कीर्तनों द्वारा प्रतिपादित किया है।

श्रीपादरायलु (1422-1480) ने हरिदास साहित्य के स्वर्णयुग का शुभारंभ किया। ''देवरनामों'' को पूजा संदर्भों में गाने के संप्रदाय को उन्होंने शुरु किया। कई कीर्तन, सुळादि, उगाभोगों को रचकर उनके द्वारा मोक्ष प्राप्त करने की अपेक्षा की। उनका लक्ष्य भक्ति की साधना ही है। फिर भी मध्व मत के तत्वों का प्रचार भी उनका उद्देश्य रहा।

शालुव नरसिंहराय को ब्रह्म हत्या दोषों से मुक्ति दिलाने वाले श्रीपादरायलु जी थे। अपने शंख के जल से उस दोष की शुद्धि की। हरिदास साहित्य को स्थिर रूप दिलाने वाले श्रीपादराय जी के शिष्य व्यासराय (सन् 1446-1539) हैं। श्रीपादराय जी से मध्व शास्त्र का सार ग्रहण कर साहित्य में इसका उपयोग किया। श्रीकृष्ण नामक मुद्रा के साथ उन्होंने कई कीर्तन रचें। इनके समय में 'व्यासकूट', 'दासकूट' द्वारा कन्नड प्रांत में धार्मिक और साहित्य क्षेत्रों में कई सेवायें की।

तिरुमल के श्रीवेङ्कटेश्वर की दिव्य मंगल मूर्ति की, नित्य सुप्रभात सेवा से प्रारंभ कर शयन समय तक सभी सेवाओं का पालन करते हुए पुजारी की जिम्मेदारियों को निभाने वाले केवल एक ही व्यक्ति हैं, कन्नड के वाग्गेयकार श्रीव्यासराय। तंत्र सारोक्त आगमन के अनुसार इन्होंने स्वामी की सेवाएँ निभायीं। तिरुमल में 12 वर्षों तक (सन् 1486-1498

भारत देश के त्रिमत के आचार्यों में द्वैत सिद्धांत के बोधक श्रीमन्मध्वाचार्य हैं। उनकी शिष्य परंपरा ही कर्नाटक की हरिदास परंपरा है। मध्वाचार्य जी के विशिष्ट शिष्यों में नरहरितीर्थ, पद्‌मनाभ तीर्थ, माधवतीर्थ, अक्षेभ्यतीर्थ प्रमुख हैं। इनमें श्रीपादरायजु पद्मनाभ तीर्थ की पीढी के आठवें मठाधिपति हैं। वे अपने गुरू स्वर्णवर्णतीर्थ के हाथों तमिलनाडु के श्रीरंगपीठ पर आसीन हुए। उसके बाद कर्नाटक के कोलारू जिले के मुलबागिलु प्रांत को द्वैत सिद्धांत का केन्द्र बनाया। माध्व मत मठ के परिसर प्रांतों में संस्कृत भाषा का प्रभाव अत्यधिक रहा। बगल में स्थित तमिलनाडु के आळ्वार संत लोग तमिल में ही पाशुरों को रचकर गाते थे। इससे पहले ही भक्त शिवचरण भक्ति तत्वों को कन्नड में ही गाया करते थे। इन दोनों का प्रभाव लोगों पर देखकर श्रीपादराजु स्वयं अपने पूजा समय में छोटी स्तुति गीतों को कन्नड में रचकर गाया करते थे। वे गीत ही कन्नड हरिदास साहित्य में सर्वप्रथम कीर्तन के रूप में ख्याति पा चुके हैं। उनके पश्चात् उनके शिष्य, वादिराज, पुरंदरदास, कनकदास ने विजयनगर परिसर प्रांतों में कीर्तन संप्रदाय को आगे बढ़ाया। उसके बाद अर्थात् विजयनगर साम्राज्य की पतनावस्था के बाद भी काखंडकि के महीपतराय, उनके भाई विजयदास दोनों हरिदास साहित्य की परंपरा को आगे बढ़ाने में सफलीकृत हुए। इस प्रकार उस समय से लेकर आज तक शिष्य और प्रशिष्यों ने हजारों की संख्या में कीर्तन रचकर समाज को दिया, हरिदास साहित्य को पुनर्जीवित किया। मानव जीवन के तत्व को समाज को सौंपकर वे मार्गदर्शक बने।[1]

[1] हरिदास वाङ्मयम् (क) पीठिका, डॉ. टी. एन. नागरत्न

साधारणतः सभी हरिदास, मध्व मत के तत्वों को ही स्वीकृति दिया करते हैं। हरि सर्वोत्तम हैं। जगत सत्य है, जीव, ईश्वर, जड़ पदार्थ, उनके बीच का अंतर, ईश्वर - जीव इन दोनों के बीच स्थित बिंब - प्रतिबिंब स्वरूप आदि तत्वों में विश्वास रखने वाले हैं हरिदास। मध्व मत के अधिपति श्रीपाद व्यासराय, वादिराजु ने इसी विश्वास को अपने कीर्तनों द्वारा प्रतिपादित किया है।

श्रीपादरायलु (1422-1480) ने हरिदास साहित्य के स्वर्णयुग का शुभारंभ किया। ''देवरनामों'' को पूजा संदर्भों में गाने के संप्रदाय को उन्होंने शुरु किया। कई कीर्तन, सुळादि, उगाभोगों को रचकर उनके द्वारा मोक्ष प्राप्त करने की अपेक्षा की। उनका लक्ष्य भक्ति की साधना ही है। फिर भी मध्व मत के तत्वों का प्रचार भी उनका उद्देश्य रहा।

शालुव नरसिंहराय को ब्रह्म हत्या दोषों से मुक्ति दिलाने वाले श्रीपादरायलु जी थे। अपने शंख के जल से उस दोष की शुद्धि की। हरिदास साहित्य को स्थिर रूप दिलाने वाले श्रीपादराय जी के शिष्य व्यासराय (सन् 1446-1539) हैं। श्रीपादराय जी से मध्व शास्त्र का सार ग्रहण कर साहित्य में इसका उपयोग किया। श्रीकृष्ण नामक मुद्रा के साथ उन्होंने कई कीर्तन रचें। इनके समय में 'व्यासकूट', 'दासकूट' द्वारा कन्नड प्रांत में धार्मिक और साहित्य क्षेत्रों में कई सेवायें की।

तिरुमल के श्रीवेङ्कटेश्वर की दिव्य मंगल मूर्ति की, नित्य सुप्रभात सेवा से प्रारंभ कर शयन समय तक सभी सेवाओं का पालन करते हुए पुजारी की जिम्मेदारियों को निभाने वाले केवल एक ही व्यक्ति हैं, कन्नड के वाग्गेयकार श्रीव्यासराय। तंत्र सारोक्त आगमन के अनुसार इन्होंने स्वामी की सेवाएँ निभायीं। तिरुमल में 12 वर्षों तक (सन् 1486-1498

तक) इस अर्चकत्व की जिम्मेदारियों को निभाया। इसके पीछे का प्रधान कारण है, इनके गुरु श्रीपादराय और उस समय के तिरुपति के पालक शालुव नरसिंहराय के बीच का सत् संबंध। श्रीव्यासराय ने वाग्गेयकार के रूप में ही नहीं बल्कि मठाधिपति के रूप में भी ख्याति पायी। पुष्करिणी की उत्तर दिशा में निर्मित श्रीव्यासराय का मठ आज भी है।

श्रीकृष्णदेवराय जी को 'कुहु योग' नामक विपत्ति से बचाने वाले व्यक्ति के रूप में श्रीव्यासराय का नाम लिया जाता है। इसके प्रतिफल में पुरंदरदास का कहना है कि राय ने इन्हें सिंहासन पर बिठाकर सम्मान किया। उसके बाद 'व्यास समुद्र' नामक गाँव को दान के रूप में दिया।

''निगमागम निर्णीत निर्जराधीश मंत्रिणे ।
नृपेंद्र मकुटीरत्न विराजित निजांघ्रये ।
निरहंकार चित्ताय नीति मार्गोपदेशिने ।
शेषाय नरवेशाय शिक्षितांतरवैरिणे ।
पुराण पुरुष ध्यान पुष्यत्पुलक मूर्तये ।
मध्वाचार्य मतांभोज मार्तंडायित तेजसे ।
ब्रह्मण्य तीर्थ शिष्याय ब्रह्म निर्मल मूर्तये ।
व्यासतीर्थ यतींद्राय विद्व दिंदीवरेंदने ।''

इस प्रकार श्रीकृष्णदेवराय द्वारा व्यासराय जी के गौरवान्वित होने की सूचना सन्. 1527 में एक शासन द्वारा प्रकट होता है।

व्यासराय के शिष्य, सहपाठी, प्रमुख वाग्गेयकार के रूप में प्रसिद्धि पाने वाले हैं श्रीवादिराजु, श्रीपुरंदरदास, श्रीकनकदास। इन तीनों ने श्रीव्यासराय के पास ही शिक्षा ग्रहण की है।

दास साहित्य को अत्युन्नत स्थान दिलाने में पुरंदरदास सफलीकृत हुए हैं। उन्होंने व्यासराय से मध्व मत की दीक्षा पाकर उन्हीं से 'पुरंदर विठला' नामक अंकित नाम को भी स्वीकृत किया।

श्रीपादराय (सन् 1404 - 1502), अन्नमाचार्य (सन् 1408-1503) के समकालिक हैं। श्रीव्यासराय (ई. सन् 1447-1539), पेदतिरुमलाचार्य के (सन् 1458-1562) समकालिक रहे हैं। वादिराजु (सन् 1418-1600), पुरंदर दास (सन् 1480-1504), कनकदास (सन् 1508-1607) ये तीनों चिन्नतिरुमलाचार्य के (सन् 1488-1562) समकालिक रहे हैं। श्रीपादराय के समय से आन्ध्र - कर्नाटक राज्यों में वाग्गेयकारों के बीच समकालीन संबंध रहे हैं। श्रीपादराय और अन्नमाचार्य एक ही समय में जीवित रहने के आधार उनके जीवन काल से प्राप्त होने पर भी उन दोनों के मिलने का आधार नहीं मिलता है। लेकिन ताल्लपाक चिन्नन्ना द्वारा रचित 'अन्नमय्य जीवित चरित्रमु' (अन्नमय्य की जीवनी) के आधार पर अन्नमय्या और पुरंदरदास, एक दूसरे से मिलने की सूचना मिलती है।

कन्नड साहित्य के इतिहास में कनकदास का विशिष्ट स्थान है। व्यासराय जी से दास दीक्षा स्वीकृत करने के पश्चात् दास संप्रदाय के अनुसार इन्होंने भी अनेक पुण्य क्षेत्रों का संदर्शन किया। पुरंदरदास और कनकदास की तरह ही व्यासराय के शिष्य और मठाधिपति होकर दास साहित्य की सेवा करने वालों में वादिराजु (1480-1600) का नाम लिया जा सकता है।

व्यासराय के समय में दास साहित्य से संबंधित कई विशिष्ट रचनाएँ निकली हैं। इस काल को दास साहित्य का स्वर्ण युग कहा जाता है। विजयनगर साम्राज्य के पतन के साथ दास साहित्य भी फीका पड गया

तक) इस अर्चकत्व की जिम्मेदारियों को निभाया। इसके पीछे का प्रधान कारण है, इनके गुरु श्रीपादराय और उस समय के तिरुपति के पालक शालुव नरसिंहराय के बीच का सत् संबंध। श्रीव्यासराय ने वाग्गेयकार के रूप में ही नहीं बल्कि मठाधिपति के रूप में भी ख्याति पायी। पुष्करिणी की उत्तर दिशा में निर्मित श्रीव्यासराय का मठ आज भी है।

श्रीकृष्णदेवराय जी को 'कुहु योग' नामक विपत्ति से बचाने वाले व्यक्ति के रूप में श्रीव्यासराय का नाम लिया जाता है। इसके प्रतिफल में पुरंदरदास का कहना है कि राय ने इन्हें सिंहासन पर बिठाकर सम्मान किया। उसके बाद 'व्यास समुद्र' नामक गाँव को दान के रूप में दिया।

''निगमागम निर्णीत निर्जराधीश मंत्रिणे ।
नृपेंद्र मकुटीरत्न विराजित निजांघ्रये ।
निरहंकार चित्ताय नीति मार्गोपदेशिने ।
शेषाय नरवेशाय शिक्षितांतरवैरिणे ।
पुराण पुरुष ध्यान पुष्यत्पुलक मूर्तये ।
मध्वाचार्य मतांभोज मार्तंडायित तेजसे ।
ब्रह्मण्य तीर्थ शिष्याय ब्रह्म निर्मल मूर्तये ।
व्यासतीर्थ यतींद्राय विद्व दिंदीवरेंदने ।''

इस प्रकार श्रीकृष्णदेवराय द्वारा व्यासराय जी के गौरवान्वित होने की सूचना सन्. 1527 में एक शासन द्वारा प्रकट होता है।

व्यासराय के शिष्य, सहपाठी, प्रमुख वाग्गेयकार के रूप में प्रसिद्धि पाने वाले हैं श्रीवादिराजु, श्रीपुरंदरदास, श्रीकनकदास। इन तीनों ने श्रीव्यासराय के पास ही शिक्षा ग्रहण की है।

दास साहित्य को अत्युन्नत स्थान दिलाने में पुरंदरदास सफलीकृत हुए हैं। उन्होंने व्यासराय से मध्व मत की दीक्षा पाकर उन्हीं से 'पुरंदर विठला' नामक अंकित नाम को भी स्वीकृत किया।

श्रीपादराय (सन् 1404 - 1502), अन्नमाचार्य (सन् 1408-1503) के समकालिक हैं। श्रीव्यासराय (ई. सन् 1447-1539), पेदतिरुमलाचार्य के (सन् 1458-1562) समकालिक रहे हैं। वादिराजु (सन् 1418-1600), पुरंदर दास (सन् 1480-1504), कनकदास (सन् 1508-1607) ये तीनों चिन्नतिरुमलाचार्य के (सन् 1488-1562) समकालिक रहे हैं। श्रीपादराय के समय से आन्ध्र - कर्नाटक राज्यों में वाग्गेयकारों के बीच समकालीन संबंध रहे हैं। श्रीपादराय और अन्नमाचार्य एक ही समय में जीवित रहने के आधार उनके जीवन काल से प्राप्त होने पर भी उन दोनों के मिलने का आधार नहीं मिलता है। लेकिन ताल्लपाक चिन्नन्ना द्वारा रचित 'अन्नमय्य जीवित चरित्रमु' (अन्नमय्य की जीवनी) के आधार पर अन्नमय्या और पुरंदरदास, एक दूसरे से मिलने की सूचना मिलती है।

कन्नड साहित्य के इतिहास में कनकदास का विशिष्ट स्थान है। व्यासराय जी से दास दीक्षा स्वीकृत करने के पश्चात् दास संप्रदाय के अनुसार इन्होंने भी अनेक पुण्य क्षेत्रों का संदर्शन किया। पुरंदरदास और कनकदास की तरह ही व्यासराय के शिष्य और मठाधिपति होकर दास साहित्य की सेवा करने वालों में वादिराजु (1480-1600) का नाम लिया जा सकता है।

व्यासराय के समय में दास साहित्य से संबंधित कई विशिष्ट रचनाएँ निकली हैं। इस काल को दास साहित्य का स्वर्ण युग कहा जाता है। विजयनगर साम्राज्य के पतन के साथ दास साहित्य भी फीका पड गया

था। पुरंदरदास जी के समय और विजय दास के समय के बीच, कीर्तन साहित्य के सेतु रूप में रहने वाले हैं महीपतराय। इनको कुछ लोग दास साहित्य परंपरा में न जोडने पर भी इनके द्वारा रचित 'देवर नाम' विशिष्ट माने जाते हैं।

दास साहित्य को पुनर्जीवित करने का गौरव विजयदास (1687-1755) को ही मिलता है। 'विजयविठला' नाम से अंकित होकर उन्होंने अपने कीर्तनों की रचना की है। विजयदास जी की शिष्य परंपरा में गोपालदास (1728-65) प्रमुख हैं। इन्होंने 'गोपाल विठला' नाम से अनेक कीर्तनों की रचना की। इस समय के हरिदास क्रम में जगन्नाथदास जी का नाम लिया जा सकता है। पुरंदरदास जी, विजयदास जी, गोपालदास जी, जगन्नाथदास जी इन चारों को 'दास चतुष्टय' कहा जाता है। मोहनदास जी, प्रसन्न वेङ्कटदास जी इसी समय के प्रसिद्ध हरिदास हैं।

हरिदास साहित्य परंपरा में स्त्रियों का योगदान भी प्रशंसनीय रहा है। गलगलिया अव्वा 'रामेसा' नामक उपनाम के साथ अपनी रचनाएँ रची हैं। इसी प्रकार हेळवन कट्टे गिरियम्मा ने 'हेळवनकट्टेरंग' नाम से प्रसिद्ध हुई हैं। हरपनहळिळ भीमव्वा 'भीमेसकृष्ण' नाम के साथ कई कीर्तनों की रचना की। इस प्रकार कन्नड साहित्य के इतिहास में कन्नड का हरिदास साहित्य, विशिष्ट स्थान प्राप्त कर चुका है।

* * *

भक्त कनकदास की जीवनी

कन्नड साहित्य में दास साहित्य विशिष्ट एवं वैविध्यपूर्ण साहित्य है। दास संप्रदाय में पुरंदरदास और कनकदास के लिए अग्र स्थान मिला है। पुरंदरदास जी प्रारंभ में अत्यंत धनवान थे। उसी कारण वे घमंड के साथ रहा करते थे। अंत में व्यासराय जी से ही प्रसंशित हुए कि ''दास हो तो पुरंदरदास ही हैं।'' इस प्रकार हरिदास पंथ के लिए वे अमूल्य रत्न साबित हुए। इसी प्रकार कनकदास भी एक सेनापति के पुत्र के होने के कारण अधिकार का स्वाद चखकर अहंकारी हो गए। अंत में भगवान की प्रेरणा से सब कुछ त्यजकर, तानपुरा हाथ में लेकर, कागिनेले आदिकेशव की महिमा की स्तुति करते हुए सडकों पर घूमते हुए भक्ति रसामृत को सबके बीच बाँटने वाले महिमावान व्यक्ति के रूप में प्रशंसित हुए।

कनकदास जितने श्रेष्ठ भगवान के भक्त हैं, उतने ही इस भव सागर के वैद्य भी हैं। इस प्रकार कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि कनकदास समान श्रेष्ठ दास कोई और हो नहीं सकता। वे केवल कीर्तनकार ही नहीं बल्कि प्रमुख चार काव्यों को रचनेवाले अद्भुत कवि भी हैं। अनेक 'देवरनाम', मुंडिगे (पहेलियाँ) रचने वाले प्रतिभा संपन्न भी हैं। सेनापति के पुत्र के होने पर भी राज वैभव के साथ जीने पर भी, भक्ति भाव संस्कारों के साथ शास्त्र एवं पुराणों की शिक्षा, शस्त्र शिक्षा पाकर तथा समर्थ पालक के रूप में वे हमें दर्शन देते हैं।

कनकदास जी पुरंदरदास जी की तरह न ही यति है न ही मठाधिपति। वे गृहस्थ हैं। गृहस्थ कर्मों का पालन करते हुए ही दास दीक्षा को स्वीकार कर कन्नड भाषा में मध्व मत को प्रचार करने वाले श्रेष्ठ दास हैं। हरिदास संप्रदाय को आगे बढ़ाने वाले श्रेष्ठ शिक्षावान हैं

था। पुरंदरदास जी के समय और विजय दास के समय के बीच, कीर्तन साहित्य के सेतु रूप में रहने वाले हैं महीपतराय। इनको कुछ लोग दास साहित्य परंपरा में न जोडने पर भी इनके द्वारा रचित 'देवर नाम' विशिष्ट माने जाते हैं।

दास साहित्य को पुनर्जीवित करने का गौरव विजयदास (1687-1755) को ही मिलता है। 'विजयविठला' नाम से अंकित होकर उन्होंने अपने कीर्तनों की रचना की है। विजयदास जी की शिष्य परंपरा में गोपालदास (1728-65) प्रमुख हैं। इन्होंने 'गोपाल विठला' नाम से अनेक कीर्तनों की रचना की। इस समय के हरिदास क्रम में जगन्नाथदास जी का नाम लिया जा सकता है। पुरंदरदास जी, विजयदास जी, गोपालदास जी, जगन्नाथदास जी इन चारों को 'दास चतुष्टय' कहा जाता है। मोहनदास जी, प्रसन्न वेङ्कटदास जी इसी समय के प्रसिद्ध हरिदास हैं।

हरिदास साहित्य परंपरा में स्त्रियों का योगदान भी प्रशंसनीय रहा है। गलगलिया अव्वा 'रामेसा' नामक उपनाम के साथ अपनी रचनाएँ रची हैं। इसी प्रकार हेळवन कट्टे गिरियम्मा ने 'हेळवनकट्टेरंग' नाम से प्रसिद्ध हुई हैं। हरपनहळिळ भीमव्वा 'भीमेसकृष्ण' नाम के साथ कई कीर्तनों की रचना की। इस प्रकार कन्नड साहित्य के इतिहास में कन्नड का हरिदास साहित्य, विशिष्ट स्थान प्राप्त कर चुका है।

* * *

भक्त कनकदास की जीवनी

कन्नड साहित्य में दास साहित्य विशिष्ट एवं वैविध्यपूर्ण साहित्य है। दास संप्रदाय में पुरंदरदास और कनकदास के लिए अग्र स्थान मिला है। पुरंदरदास जी प्रारंभ में अत्यंत धनवान थे। उसी कारण वे घमंड के साथ रहा करते थे। अंत में व्यासराय जी से ही प्रसंशित हुए कि ''दास हो तो पुरंदरदास ही हैं।'' इस प्रकार हरिदास पंथ के लिए वे अमूल्य रत्न साबित हुए। इसी प्रकार कनकदास भी एक सेनापति के पुत्र के होने के कारण अधिकार का स्वाद चखकर अहंकारी हो गए। अंत में भगवान की प्रेरणा से सब कुछ त्यजकर, तानपुरा हाथ में लेकर, कागिनेले आदिकेशव की महिमा की स्तुति करते हुए सडकों पर घूमते हुए भक्ति रसामृत को सबके बीच बाँटने वाले महिमावान व्यक्ति के रूप में प्रशंसित हुए।

कनकदास जितने श्रेष्ठ भगवान के भक्त हैं, उतने ही इस भव सागर के वैद्य भी हैं। इस प्रकार कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि कनकदास समान श्रेष्ठ दास कोई और हो नहीं सकता। वे केवल कीर्तनकार ही नहीं बल्कि प्रमुख चार काव्यों को रचनेवाले अद्भुत कवि भी हैं। अनेक 'देवरनाम', मुंडिगे (पहेलियाँ) रचने वाले प्रतिभा संपन्न भी हैं। सेनापति के पुत्र के होने पर भी राज वैभव के साथ जीने पर भी, भक्ति भाव संस्कारों के साथ शास्त्र एवं पुराणों की शिक्षा, शस्त्र शिक्षा पाकर तथा समर्थ पालक के रूप में वे हमें दर्शन देते हैं।

कनकदास जी पुरंदरदास जी की तरह न ही यति है न ही मठाधिपति। वे गृहस्थ हैं। गृहस्थ कर्मों का पालन करते हुए ही दास दीक्षा को स्वीकार कर कन्नड भाषा में मध्व मत को प्रचार करने वाले श्रेष्ठ दास हैं। हरिदास संप्रदाय को आगे बढ़ाने वाले श्रेष्ठ शिक्षावान हैं

कनकदास। सन् 17 वीं सदी में काखंडकि के महिपतिराय के पुत्र कृष्णराय ने अपने एक कीर्तन में हरिदास परंपरा का प्रस्ताव कर उन सबको नमस्कार करते हुए कहा कि ताल्लपाक वंश की साधु भक्ति और कनकदास की हरि भक्ति श्रेष्ठ एवं प्रशंसनीय है। इस प्रकार उनका स्मरण करते हुए ऐसा गान किया जैसे वंदना कर रहे हों। यहाँ ताल्लपाक अन्नमाचार्य के साथ कनकदास का भी स्मरण करना एक विशेष विषय हैं।[2]

कनकदास, पुरंदरदास के समवयस्क तथा समकालिक थे। दोनों व्यासराय के शिष्य थे। पंडित और साधारण लोगों के लिए चिरपरिचित हैं। दोनों के जीवन में स्वयं परमात्मा ही परीक्षक बनकर आए और दोनों की परीक्षा लेकर वैराग्य प्रदान करने की अनेक कहानियाँ मिलती हैं। पुरंदरदास की तरह ही कनकदास के काव्य भी काव्य सौरभ के लिए, कीर्तनों के गूढ़र्थ के लिए, भावनाओं की तीव्रता के लिए विख्यात हैं। इनमें निहित सामाजिक चेतना को देखकर पंडितगण आश्चर्यचकित हो गये। साधारण जन इन कीर्तनों का गान कर तन्मय हो गये।

कनकदास की जीवनी अत्यंत कुतूहलजनक है। कनकदास कुरूब कुल के थे। सन् 1508 में धारवाड जिले के बंकापुर के समीप 'बाडा' नामक ग्राम में इनका जन्म हुआ था। पिता का नाम बीरप्पा था। माँ का नाम बच्चम्मा था। ये पहले तिम्मप्पा नाम से जाने जाते थे। इनके पिता सेनापति थे। बचपन में ही पिता को खोने के कारण तिम्मप्पा को माँ ने लाड प्यार से पाल - पोसकर बडा किया। कुश्ती, शस्त्र शिक्षा, तल्वार चलाना, शिकार खेलना, इन सबमें तिम्मप्पा अत्यंत रुचि के साथ भाग

[2]कनकदास (कन्नड), पृ. सं - 13, टि. एस. नागरत्न

लिया करते थे। कुछ समय के पश्चात् 'बाडा' प्रांत के सेनापति बनकर तिम्मप्प नायक कहलवाये। किसानों से धान्य रूप में कर वसूल कर, उसे बेचकर उस धन को वे विजयनगर के खजाने को सौंपा करते थे। युद्ध के समय विजयनगर राजा का सहायक बनकर वीरता के साथ युद्ध करते थे। राजा के प्रीति पात्र बनकर योग्य अधिकारी के रूप में उन्होंने नाम भी कमाया।

खेती बाडी के समय जमीन खोदते समय एक बार तिम्मप्पा नायक को सुवर्ण निधि हासिल हुई। उस निधि के साथ उन्होंने अपने गाँव के पास स्थित 'कागिनेले' में एक सुन्दर मंदिर बनवाया। अपने गाँव के भगवान आदिकेशव की मूर्ति को ले जाकर कागिनेले मंदिर में प्रतिष्ठित करवाया। गरीबों के बीच धन और सोना दान करने के कारण और जमीन में निधि के मिलने के कारण, लोग उन्हें कनकनायक नाम से पुकारने लगे।

तिरुपति आदि क्षेत्रों में जिस प्रकार की पूजा पद्धतियाँ होती हैं, उसी प्रकार की पूजा पद्धतियाँ कागिनेले में भी कनकनायक ने प्रवेश करवाया। धीरे-धीरे आस पास के लोग तिरुपति जाकर मनौतियाँ देने की बजाय कागिनेले आदिकेशव को ही समर्पित करने लगे। कनकनायक का व्यक्तित्व, दर्प, मंदिर के उत्सवों के निर्वहण कार्यों में दक्षता आदि के कारण कागिनेले ''उत्तर कर्नाटक'' की तिरुपति बन गयी। लोगों में यह विश्वास जम गया कि कनकनायक को तिरुपति के तिम्मप्पा का अनुग्रह मिलने के कारण ही वे कागिनेले में बसे हुए हैं और तिरुपति क्षेत्र में समर्पित करने वाले भेंटों को भगवान आदिकेशव को समर्पित किये जाने पर वे सब तिरुमलप्पा को ही समर्पित होंगे।

कनकदास। सन् 17 वीं सदी में काखंडकि के महिपतिराय के पुत्र कृष्णराय ने अपने एक कीर्तन में हरिदास परंपरा का प्रस्ताव कर उन सबको नमस्कार करते हुए कहा कि ताल्लपाक वंश की साधु भक्ति और कनकदास की हरि भक्ति श्रेष्ठ एवं प्रशंसनीय है। इस प्रकार उनका स्मरण करते हुए ऐसा गान किया जैसे वंदना कर रहे हों। यहाँ ताल्लपाक अन्नमाचार्य के साथ कनकदास का भी स्मरण करना एक विशेष विषय हैं।[2]

कनकदास, पुरंदरदास के समवयस्क तथा समकालिक थे। दोनों व्यासराय के शिष्य थे। पंडित और साधारण लोगों के लिए चिरपरिचित हैं। दोनों के जीवन में स्वयं परमात्मा ही परीक्षक बनकर आए और दोनों की परीक्षा लेकर वैराग्य प्रदान करने की अनेक कहानियाँ मिलती हैं। पुरंदरदास की तरह ही कनकदास के काव्य भी काव्य सौरभ के लिए, कीर्तनों के गूढ़र्थ के लिए, भावनाओं की तीव्रता के लिए विख्यात हैं। इनमें निहित सामाजिक चेतना को देखकर पंडितगण आश्चर्यचकित हो गये। साधारण जन इन कीर्तनों का गान कर तन्मय हो गये।

कनकदास की जीवनी अत्यंत कुतूहलजनक है। कनकदास कुरूब कुल के थे। सन् 1508 में धारवाड जिले के बंकापुर के समीप 'बाडा' नामक ग्राम में इनका जन्म हुआ था। पिता का नाम बीरप्पा था। माँ का नाम बच्चम्मा था। ये पहले तिम्मप्पा नाम से जाने जाते थे। इनके पिता सेनापति थे। बचपन में ही पिता को खोने के कारण तिम्मप्पा को माँ ने लाड प्यार से पाल - पोसकर बडा किया। कुश्ती, शस्त्र शिक्षा, तल्वार चलाना, शिकार खेलना, इन सबमें तिम्मप्पा अत्यंत रुचि के साथ भाग

[2]कनकदास (कन्नड), पृ. सं - 13, टि. एस. नागरत्न

लिया करते थे। कुछ समय के पश्चात् 'बाडा' प्रांत के सेनापति बनकर तिम्मप्प नायक कहलवाये। किसानों से धान्य रूप में कर वसूल कर, उसे बेचकर उस धन को वे विजयनगर के खजाने को सौंपा करते थे। युद्ध के समय विजयनगर राजा का सहायक बनकर वीरता के साथ युद्ध करते थे। राजा के प्रीति पात्र बनकर योग्य अधिकारी के रूप में उन्होंने नाम भी कमाया।

खेती बाडी के समय जमीन खोदते समय एक बार तिम्मप्पा नायक को सुवर्ण निधि हासिल हुई। उस निधि के साथ उन्होंने अपने गाँव के पास स्थित 'कागिनेले' में एक सुन्दर मंदिर बनवाया। अपने गाँव के भगवान आदिकेशव की मूर्ति को ले जाकर कागिनेले मंदिर में प्रतिष्ठित करवाया। गरीबों के बीच धन और सोना दान करने के कारण और जमीन में निधि के मिलने के कारण, लोग उन्हें कनकनायक नाम से पुकारने लगे।

तिरुपति आदि क्षेत्रों में जिस प्रकार की पूजा पद्धतियाँ होती हैं, उसी प्रकार की पूजा पद्धतियाँ कागिनेले में भी कनकनायक ने प्रवेश करवाया। धीरे-धीरे आस पास के लोग तिरुपति जाकर मनौतियाँ देने की बजाय कागिनेले आदिकेशव को ही समर्पित करने लगे। कनकनायक का व्यक्तित्व, दर्प, मंदिर के उत्सवों के निर्वहण कार्यों में दक्षता आदि के कारण कागिनेले "उत्तर कर्नाटक" की तिरुपति बन गयी। लोगों में यह विश्वास जम गया कि कनकनायक को तिरुपति के तिम्मप्पा का अनुग्रह मिलने के कारण ही वे कागिनेले में बसे हुए हैं और तिरुपति क्षेत्र में समर्पित करने वाले भेंटों को भगवान आदिकेशव को समर्पित किये जाने पर वे सब तिरुमलप्पा को ही समर्पित होंगे।

जब से कनकनायक ने कागिनेले में मंदिर नवाया, तब से वे आदिकेशव के प्रति कीर्तन रचकर उन्हें समर्पित किया करते थे। फिर भी, उनमें लोगों पर राज करने की इच्छा कम नहीं हुई। उस समय भगवान आदिकेशव, कनकनायक के स्वप्न में दिखायी दिए और आदेश दिया कि वे उनके दास बनकर निरंतर पूजा - पाठ में निमग्न रहे। लेकिन कनकदास साहब बनकर प्रजा का पालन करना चाहते थे न कि दास बनकर सडकों पर घूमना। यही कहकर कनकनायक ने भगवान आदिकेशव से प्रार्थना की।

एक बार विजयनगर के राजा युद्ध के लिए तैयार हुए। उनके साथ कनकनायक ने भी युद्ध भूमि में प्रवेश किया। अत्यंत जोश के साथ लड़ने लगे। तभी उनके हाथ में शत्रु सैनिक का बाण लगा, तुरंत उनका खड्ग नीचे गिर गया। 'आदिकेशव' कहते हुए कनकदास गिरकर बेहोश हो गये। शत्रु लोगों ने सोचा कि कनकनायक मर गये थे। इसीलिए उन्हें वहीं छोड चले गये। उस समय 'आदिकेशव' मानव रूप में आकर उनकी सेवाएँ की। कनकनायक ने आँखें खोलकर देखते हुए पूछा कि ''तुम कौन हो?'' इसके जवाब में उस व्यक्ति ने कहा ''तुमने मुझे 'आदिकेशव' कहकर बुलाया, इसलिए मैं आया। दास बनकर मुझे पूजने के लिए कहा तो तुम माने नहीं, साहबगिरी करना चाहते थे। शवों के ऊपर इस प्रकार दुःखित होकर पडे हुए हो, अभी भी साहबगिरी से संतुष्ट नहीं हुए? अब दास बनने के लिए सम्मति दोगे?'' इस प्रकार 'आदिकेशव' ने प्रश्न किया। तब कनकनायक ने उत्तर दिया कि उसके देह पर लगे घावों के दर्द के कारण वे कुछ भी सोच नहीं पा रहे हैं। तब आदिकेशव जी अपने अमृत हस्तों से कनकनायक के देह को सहलाया। केशव की कृपा के कारण उनके शरीर के घाव दूर हो गये। तब ये आनंद से कूदते हुए दास

बनने की स्वीकृति दी। उन्होंने भगवान से प्रार्थना की कि उन्हें वे हरिदास का दास बनाए। कनकनायक की स्तुति से संतुष्ट होकर भगवान आदिकेशव ने उन्हें वरदान दिया कि जब भी वे उनका स्मरण करेंगे तब उन्हें वे दर्शन देंगे। यह कहते हुए भगवान अदृश्य हो गये।[3]

इस विषय को कनकदास ने अपने एक कीर्तन द्वारा व्यक्त किया। सद्गुरु बनकर उनके अंदर के अहंकार को दूर कर सुस्थिर मार्ग दिखाने वाले हरि की स्तुति की। रंगभूमि से कनकनायक पीछे मुडे।

कुछ समय पश्चात् उन्हें पत्नी वियोग सहना पडा। राजकार्य में उनकी आसक्ति कम हो गयी। शिकार खेलना भी छोड दिया। मन को वश में रखने के प्रयत्न करने लगे। इस बीच उनकी माँ जिनकी वे भक्ति के साथ सेवा किया करते थे, वे भी चल बसीं, तब से उनमें वैराग्य भाव अंकुरित होने लगे। अधिकार के भार को किसी और को सौंपकर, धन और सोना दान में देकर, तानपुरा हाथ में लेकर कागिनेले चल पडे। अपने उद्धार करने के लिए भगवान आदिकेशव से प्रार्थना करते हुए वे मंदिर में ही सो गये। भगवान स्वप्न में दर्शन देकर उन्हें व्यासराय के शिष्य बनने के लिए आदेश दिया। तुरंत कनकराय, व्यासराय को खोजते हुए निकल पडे। उस समय व्यासराय मदनपल्ली में व्यास समुद्र का निर्माण करवा रहे थे। वहाँ जाकर गुरू को प्रणाम कर उन्हें मंत्रोपदेश देने की प्रार्थना की। व्यासराय ने हँसते हुए कहा-'कुरूब' कुलवाले के लिए मंत्र कैसा? क्या 'कोण मंत्र' (भैंसा मंत्र)। कनकराय ने कहा कि ''उस पर गुरु की कृपा हो गयी है।'' ये कहते हुए पास के एक वृक्ष के नीचे

[3]श्री श्रीनिवासन हाडुगळु, सं - 2, 1982, तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् से प्रकाशित।

जब से कनकनायक ने कागिनेले में मंदिर नवाया, तब से वे आदिकेशव के प्रति कीर्तन रचकर उन्हें समर्पित किया करते थे। फिर भी, उनमें लोगों पर राज करने की इच्छा कम नहीं हुई। उस समय भगवान आदिकेशव, कनकनायक के स्वप्न में दिखायी दिए और आदेश दिया कि वे उनके दास बनकर निरंतर पूजा - पाठ में निमग्न रहे। लेकिन कनकदास साहब बनकर प्रजा का पालन करना चाहते थे न कि दास बनकर सडकों पर घूमना। यही कहकर कनकनायक ने भगवान आदिकेशव से प्रार्थना की।

एक बार विजयनगर के राजा युद्ध के लिए तैयार हुए। उनके साथ कनकनायक ने भी युद्ध भूमि में प्रवेश किया। अत्यंत जोश के साथ लड़ने लगे। तभी उनके हाथ में शत्रु सैनिक का बाण लगा, तुरंत उनका खड्ग नीचे गिर गया। 'आदिकेशव' कहते हुए कनकदास गिरकर बेहोश हो गये। शत्रु लोगों ने सोचा कि कनकनायक मर गये थे। इसीलिए उन्हें वहीं छोड चले गये। उस समय 'आदिकेशव' मानव रूप में आकर उनकी सेवाएँ की। कनकनायक ने आँखें खोलकर देखते हुए पूछा कि ''तुम कौन हो?'' इसके जवाब में उस व्यक्ति ने कहा ''तुमने मुझे 'आदिकेशव' कहकर बुलाया, इसलिए मैं आया। दास बनकर मुझे पूजने के लिए कहा तो तुम माने नहीं, साहबगिरी करना चाहते थे। शवों के ऊपर इस प्रकार दुःखित होकर पडे हुए हो, अभी भी साहबगिरी से संतुष्ट नहीं हुए? अब दास बनने के लिए सम्मति दोगे?'' इस प्रकार 'आदिकेशव' ने प्रश्न किया। तब कनकनायक ने उत्तर दिया कि उसके देह पर लगे घावों के दर्द के कारण वे कुछ भी सोच नहीं पा रहे हैं। तब आदिकेशव जी अपने अमृत हस्तों से कनकनायक के देह को सहलाया। केशव की कृपा के कारण उनके शरीर के घाव दूर हो गये। तब ये आनंद से कूदते हुए दास

बनने की स्वीकृति दी। उन्होंने भगवान से प्रार्थना की कि उन्हें वे हरिदास का दास बनाए। कनकनायक की स्तुति से संतुष्ट होकर भगवान आदिकेशव ने उन्हें वरदान दिया कि जब भी वे उनका स्मरण करेंगे तब उन्हें वे दर्शन देंगे। यह कहते हुए भगवान अदृश्य हो गये।[3]

इस विषय को कनकदास ने अपने एक कीर्तन द्वारा व्यक्त किया। सद्गुरु बनकर उनके अंदर के अहंकार को दूर कर सुस्थिर मार्ग दिखाने वाले हरि की स्तुति की। रंगभूमि से कनकनायक पीछे मुडे।

कुछ समय पश्चात् उन्हें पत्नी वियोग सहना पडा। राजकार्य में उनकी आसक्ति कम हो गयी। शिकार खेलना भी छोड दिया। मन को वश में रखने के प्रयत्न करने लगे। इस बीच उनकी माँ जिनकी वे भक्ति के साथ सेवा किया करते थे, वे भी चल बसीं, तब से उनमें वैराग्य भाव अंकुरित होने लगे। अधिकार के भार को किसी और को सौंपकर, धन और सोना दान में देकर, तानपुरा हाथ में लेकर कागिनेले चल पडे। अपने उद्धार करने के लिए भगवान आदिकेशव से प्रार्थना करते हुए वे मंदिर में ही सो गये। भगवान स्वप्न में दर्शन देकर उन्हें व्यासराय के शिष्य बनने के लिए आदेश दिया। तुरंत कनकराय, व्यासराय को खोजते हुए निकल पडे। उस समय व्यासराय मदनपल्ली में व्यास समुद्र का निर्माण करवा रहे थे। वहाँ जाकर गुरू को प्रणाम कर उन्हें मंत्रोपदेश देने की प्रार्थना की। व्यासराय ने हँसते हुए कहा-'कुरूब' कुलवाले के लिए मंत्र कैसा? क्या 'कोण मंत्र' (भैंसा मंत्र)। कनकराय ने कहा कि ''उस पर गुरु की कृपा हो गयी है।'' ये कहते हुए पास के एक वृक्ष के नीचे

[3]श्री श्रीनिवासन हाडुगळु, सं - 2, 1982, तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् से प्रकाशित।

बैठकर भक्ति सहित कोण, कोण (भैंसा, भैंसा...) कहते हुए जप करने लगे। उनकी दृढ़ भक्ति से प्रसन्न होकर यम धर्मराज का वाहन भैंसा उनके सामने प्रत्यक्ष हुआ। उसे गुरु के पास ले जाकर कनकनायक ने अत्यंत विनयपूर्वक प्रार्थना की कि ''हे गुरु आपके द्वारा दिये गये मंत्र से मुझे सिद्धि मिली, भैंसा प्रत्यक्ष हुआ। आगे का कार्य बताइये।'' व्यासराय आनंदित होकर कहने लगे कि उनके द्वारा निर्मित व्यास समुद्र के एक कोने में ढ़ेर समान पडे हुए बडे पत्थर को भैंसा के सहारे तुडवाये। भैंसा ने क्षणों में अपनी सींगों से उस पत्थर को तोडते हुए उसमें एक छेद बनाया। उस छेद द्वारा पानी प्रवाहित कर चारों ओर की भूमि को खेती - बाडी के लिए उन्होंने अनुकूल बनाया। आज भी उस स्थल में 'कनक का छेद' नामक एक प्रसिद्ध छेद को देखा जा सकता है। संतृप्त होकर व्यासराय ने कनकराय को शिष्य के रूप में स्वीकार कर उपदेश दिया।''[4] उस समय से कनकनायक, कनकदास बन गये। व्यासराय के प्रिय शिष्य भी बन गये।

जब से कनकदास व्यासराय से मिले, तब से मठ के अन्य भक्तों में तथा शिष्यों में ईर्ष्या, द्वेष पनपने लगे। दोनों को एक साथ मिले हुए देखकर वे सहन नहीं कर सके। उनके द्वारा कन्नड भाषा में 'देवरनामों' का गाना लोगों में असंतृप्ति जगाने लगी। इतना ही नहीं व्यासराय के शिष्य, कनकदास को नीच कुल वाला कहते हुए हीनता से उनसे पेश आने लगे। कनकदास, व्यासराय द्वारा दिखाने वाले प्रेम और कृपा को देखकर वे लोग ईर्ष्या करने लगे। पुरंदरदास के आगमन से मठ के लोगों का द्वेष दुगुना हो गया। भजन करते समय स्वामी जी के संग पुरंदरदास

[4]श्री श्रीनिवासन हाडुगळु, सं - 2, 1982, तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् से प्रकाशित।

और कनकदास का रहना उनके द्वेष का कारण बना। कनकदास को किसी भी तरह मठ से भिजवाने के लिए वे लोग षड्यंत्र रचाने लगे। इस विषय को व्यासराय जानते हुए भी अनजान बनकर रह गये। वे शिष्यों को प्रत्यक्ष रूप में प्रकट किया करते थे कि कनकदास अत्यंत ज्ञानी व्यक्ति हैं।

एक दिन विजयनगर में दोपहर के समय विद्या गोष्ठी हो रही थी। उस समय पुरंदरदास और कनकदास को गुरू ने अपने पास बिठाया। उस समय पंडित लोग मोक्ष के अधिकारी कौन हो सकते हैं, इस विषय पर वाद प्रतिवाद चला रहे थे। किसी को भी यह कहने का साहस नहीं था कि मोक्ष पाने की योग्यता उनमें है। इसलिए सभी चुपचाप रह गये। तब व्यासराय जी ने कनकदास के चेहरे की ओर देखा तो उन्होंने उत्तर दिया कि ''मैं जाऊँगा तो जाऊँगा''। कनकदास की बातों को सुनकर बाकी शिष्य क्रुद्ध हुए। गुरू व्यासराय और उत्तम कुल वाले आपस में बातचीत करने लगे कि उन जैसे लोगों के सामने 'कुरूब कुल वाले' का इस प्रकार कहने के पीछे कितना धैर्य है? फिर वे कनकदास की निंदा करने लगे। तब व्यासराय ने कनकदास से कहा कि 'तुम्हारी बातों का अर्थ क्या है? स्पष्ट करो?' ऐसा पूछने पर कनकदास ने उसका अर्थ बताते हुए कहा कि ''मैं' और 'मेरा' नामक अहंकार जिस मनुष्य में नहीं रहेगा, वह मनुष्य मोक्ष पाने के लिए योग्य बनेगा।' इस प्रकार कहने के बाद सभी शिष्य शर्मिंदा होकर, सिर झुकाकर रह गये। इस प्रसंग के बाद व्यासराय ने शिष्यों को समझाया कि कनकदास के द्वारा कहे गये हर वाक्य में हर शब्द में गूढ़ार्थ छिपा हुआ रहता है।''[5]

[5]श्री श्रीनिवासन हाडुगळु, सं - 2, 1982, तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् से प्रकाशित।

बैठकर भक्ति सहित कोण, कोण (भैंसा, भैंसा...) कहते हुए जप करने लगे। उनकी दृढ़ भक्ति से प्रसन्न होकर यम धर्मराज का वाहन भैंसा उनके सामने प्रत्यक्ष हुआ। उसे गुरु के पास ले जाकर कनकनायक ने अत्यंत विनयपूर्वक प्रार्थना की कि "हे गुरु आपके द्वारा दिये गये मंत्र से मुझे सिद्धि मिली, भैंसा प्रत्यक्ष हुआ। आगे का कार्य बताइये।" व्यासराय आनंदित होकर कहने लगे कि उनके द्वारा निर्मित व्यास समुद्र के एक कोने में ढ़ेर समान पडे हुए बडे पत्थर को भैंसा के सहारे तुडवाये। भैंसा ने क्षणों में अपनी सींगों से उस पत्थर को तोडते हुए उसमें एक छेद बनाया। उस छेद द्वारा पानी प्रवाहित कर चारों ओर की भूमि को खेती - बाडी के लिए उन्होंने अनुकूल बनाया। आज भी उस स्थल में 'कनक का छेद' नामक एक प्रसिद्ध छेद को देखा जा सकता है। संतृप्त होकर व्यासराय ने कनकराय को शिष्य के रूप में स्वीकार कर उपदेश दिया।"[4] उस समय से कनकनायक, कनकदास बन गये। व्यासराय के प्रिय शिष्य भी बन गये।

जब से कनकदास व्यासराय से मिले, तब से मठ के अन्य भक्तों में तथा शिष्यों में ईर्ष्या, द्वेष पनपने लगे। दोनों को एक साथ मिले हुए देखकर वे सहन नहीं कर सके। उनके द्वारा कन्नड भाषा में 'देवरनामों' का गाना लोगों में असंतृप्ति जगाने लगी। इतना ही नहीं व्यासराय के शिष्य, कनकदास को नीच कुल वाला कहते हुए हीनता से उनसे पेश आने लगे। कनकदास, व्यासराय द्वारा दिखाने वाले प्रेम और कृपा को देखकर वे लोग ईर्ष्या करने लगे। पुरंदरदास के आगमन से मठ के लोगों का द्वेष दुगुना हो गया। भजन करते समय स्वामी जी के संग पुरंदरदास

[4]श्री श्रीनिवासन हाड्गळु, सं - 2, 1982, तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् से प्रकाशित।

और कनकदास का रहना उनके द्वेष का कारण बना। कनकदास को किसी भी तरह मठ से भिजवाने के लिए वे लोग षड्यंत्र रचाने लगे। इस विषय को व्यासराय जानते हुए भी अनजान बनकर रह गये। वे शिष्यों को प्रत्यक्ष रूप में प्रकट किया करते थे कि कनकदास अत्यंत ज्ञानी व्यक्ति हैं।

एक दिन विजयनगर में दोपहर के समय विद्या गोष्ठी हो रही थी। उस समय पुरंदरदास और कनकदास को गुरू ने अपने पास बिठाया। उस समय पंडित लोग मोक्ष के अधिकारी कौन हो सकते हैं, इस विषय पर वाद प्रतिवाद चला रहे थे। किसी को भी यह कहने का साहस नहीं था कि मोक्ष पाने की योग्यता उनमें है। इसलिए सभी चुपचाप रह गये। तब व्यासराय जी ने कनकदास के चेहरे की ओर देखा तो उन्होंने उत्तर दिया कि "मैं जाऊँगा तो जाऊँगा"। कनकदास की बातों को सुनकर बाकी शिष्य क्रुद्ध हुए। गुरू व्यासराय और उत्तम कुल वाले आपस में बातचीत करने लगे कि उन जैसे लोगों के सामने 'कुरूब कुल वाले' का इस प्रकार कहने के पीछे कितना धैर्य है? फिर वे कनकदास की निंदा करने लगे। तब व्यासराय ने कनकदास से कहा कि 'तुम्हारी बातों का अर्थ क्या है? स्पष्ट करो?' ऐसा पूछने पर कनकदास ने उसका अर्थ बताते हुए कहा कि "मैं' और 'मेरा' नामक अहंकार जिस मनुष्य में नहीं रहेगा, वह मनुष्य मोक्ष पाने के लिए योग्य बनेगा।' इस प्रकार कहने के बाद सभी शिष्य शर्मिंदा होकर, सिर झुकाकर रह गये। इस प्रसंग के बाद व्यासराय ने शिष्यों को समझाया कि कनकदास के द्वारा कहे गये हर वाक्य में हर शब्द में गूढ़ार्थ छिपा हुआ रहता है।"[5]

[5]श्री श्रीनिवासन हाड्गळु, सं - 2, 1982, तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् से प्रकाशित।

एक बार श्रीकनकदास के स्वप्न में भगवान श्रीनिवास का साक्षात्कार होकर उन्हें तिरुमल बुलाने की एक घटना है। ''श्रीकनकदास को श्रीहरि सपने में आकर तिरुमल में उनके विवाह में उपस्थित होने के लिए आमंत्रित करने पर कनकदास तिरुपति गये। भगवान श्रीनिवास ने मंदिर के अधिकारियों को स्वप्न में साक्षात्कार देकर सात पर्वत चढकर आने वाले इस दास को सादर आमंत्रित करने के लिए आदेश दिया। वे सभी पूर्णकुंभ लेकर चल पड़े। अधिकारियों ने इन्हीं से मिलकर पूछा कि कनकदास कहाँ है? तब उन्होंने उत्तर दिया कि ''पहले आने वालों के पीछे और पीछे आने वालों के आगे हैं।'' उन्हें कुछ समझ में नहीं आया और वे लौटकर चले गये। अधिक भीड़ के कारण दास को भगवान का दर्शन नहीं हुआ। उस रात को भूख से तडपने वाले दास के पास भगवान मनुष्य के रूप में आकर उनकी भूख मिटाकर, ओढ़ने के लिए एक सुन्दर रेश्मी वस्त्र देकर चले गये। दूसरे दिन सुबह ही अधिकारी लोग भगवान के वस्त्र की चोरी करने के इलजाम में कनकदास को पकडकर पिटवाया। तब कहा जाता है कि कनकदास को जो चोटें पहुँची, वह चोट स्वामी की मूर्ति में घावों के रूप में दिखाई देने के कारण कनकदास को महान व्यक्ति के रूप में उन्होंने पहचाना।[6]

इस प्रकार कनकदास, दास लोंगों में श्रेष्ठ बनकर भगवत भक्त बनकर, व्यासराय की अनुमति पाकर अनेकानेक दिव्यक्षेत्रों के दर्शन करने के लिए निकल पड़े। तानपूरा साथ में लेकर हरि भजन गाते हुए वेलूरू, श्रीरंग पट्टणम्, मेलुकोटा, सोसले, मळूरू, हंपी, तिरुपति क्षेत्रों के

[6] प्रमुख कन्नडान्ध्र वाग्गेयकारूल संकीर्तनललो, पृ - 37, तिरुमल श्रीनिवासुनि प्रशंसा एक परिशीलना, डॉ. माळगि व्यासराज।

दर्शन किये। उन्होंने उद्बोधित किया कि सद्गति पाने के लिए तीर्थयात्रा ही एक मात्र सुलभ उपाय है। इन क्षेत्रों में कुछ समय तक रहकर उन क्षेत्रों की देवताओं को पूजते हुए कनकदास कृतार्थ हुए।

* * *

एक बार श्रीकनकदास के स्वप्न में भगवान श्रीनिवास का साक्षात्कार होकर उन्हें तिरुमल बुलाने की एक घटना है। ''श्रीकनकदास को श्रीहरि सपने में आकर तिरुमल में उनके विवाह में उपस्थित होने के लिए आमंत्रित करने पर कनकदास तिरुपति गये। भगवान श्रीनिवास ने मंदिर के अधिकारियों को स्वप्न में साक्षात्कार देकर सात पर्वत चढकर आने वाले इस दास को सादर आमंत्रित करने के लिए आदेश दिया। वे सभी पूर्णकुंभ लेकर चल पड़े। अधिकारियों ने इन्हीं से मिलकर पूछा कि कनकदास कहाँ है? तब उन्होंने उत्तर दिया कि ''पहले आने वालों के पीछे और पीछे आने वालों के आगे हैं।'' उन्हें कुछ समझ में नहीं आया और वे लौटकर चले गये। अधिक भीड़ के कारण दास को भगवान का दर्शन नहीं हुआ। उस रात को भूख से तडपने वाले दास के पास भगवान मनुष्य के रूप में आकर उनकी भूख मिटाकर, ओढ़ने के लिए एक सुन्दर रेश्मी वस्त्र देकर चले गये। दूसरे दिन सुबह ही अधिकारी लोग भगवान के वस्त्र की चोरी करने के इलजाम में कनकदास को पकडकर पिटवाया। तब कहा जाता है कि कनकदास को जो चोटें पहुँची, वह चोट स्वामी की मूर्ति में घावों के रूप में दिखाई देने के कारण कनकदास को महान व्यक्ति के रूप में उन्होंने पहचाना।[6]

इस प्रकार कनकदास, दास लोंगों में श्रेष्ठ बनकर भगवत भक्त बनकर, व्यासराय की अनुमति पाकर अनेकानेक दिव्यक्षेत्रों के दर्शन करने के लिए निकल पड़े। तानपूरा साथ में लेकर हरि भजन गाते हुए वेलूरू, श्रीरंग पट्टणम्, मेलुकोटा, सोसले, मळूरू, हंपी, तिरुपति क्षेत्रों के

[6] प्रमुख कन्नडान्ध्र वाग्गेयकारूल संकीर्तनललो, पृ - 37, तिरुमल श्रीनिवासुनि प्रशंसा एक परिशीलना, डॉ. माळगि व्यासराज।

दर्शन किये। उन्होंने उद्बोधित किया कि सद्गति पाने के लिए तीर्थयात्रा ही एक मात्र सुलभ उपाय है। इन क्षेत्रों में कुछ समय तक रहकर उन क्षेत्रों की देवताओं को पूजते हुए कनकदास कृतार्थ हुए।

* * *

भक्त कनकदास के कीर्तन

कन्नड हरिदासों में कनकदास कुछ भिन्न और विशिष्टता को लिये हुए दिखाई देते हैं। वे केवल कीर्तनकार ही नहीं, बल्कि स्वयं कवि भी हैं। इस कारण उनमें द्विमुख रूपी साहित्य को देखा जा सकता है। उनमें एक है भक्ति साहित्य - कीर्तन साहित्य के रूप में, दूसरा है काव्य की रचना एक व्यक्तिनिष्ठ तथा दूसरा वस्तुनिष्ठ के रूप में।

पुरंदरदास की तरह कनकदास ने भले ही उतने कीर्तन न रचे हों, फिर भी इनके कीर्तन किसी भी हरिदास के कीर्तन से निम्न कोटि की नहीं हैं। मुख्य रूप से कनकदास, हरि भक्ति को प्रतिपादित करने वाले भक्त हैं। इसी कारण उनके कीर्तनों का अधिक भाग सर्व समर्पण भाव को लेकर दिखाई देता है। कनकदास की देशी शैली और जीवन के अनुभवों ने उन्हें एक उत्तम कीर्तनकार के रूप में खडा किया। लोक नीति, सामाजिक चेतना, आत्मनिवेदन उनके कीर्तनों में दर्शन देते हैं। पुरंदरदास की तरह कनकदास ने भी इसी टेक के साथ कीर्तनों की रचना की, जैसे ''जिस किसी ने जो भी कार्य किये हैं, वे तो अपने पेट के लिए, थोडे से कपडे के लिए और मुट्ठीभर खाने के लिए'' हैं।

''एवरेमि चेसिना पोट्टकोसमे जानेडु बट्ट कोसमे
पिडिकेडु मुद्दकोसमे ।
तालदंडिय श्रुतिमेला तंबूर चेबूनि
वेश्यवले नर्तिंचुटा पोट्टकोसम् जानेडु बट्ट कोसम्
सन्यासि जंगमबोगि जेट्टि मोंडि बैरागि
नानावेषमु लन्नियुनु पोट्टकोसम् जानेडु बट्ट कोसम्

वंगि डोंकलोन अणगि कट्टेरायि पट्टकोनि
दोंगतनमु चेयुटा पोट्टकोसम् जानेडु बट्टकोसम् ।।''

इसका अर्थ है ''कोई भी कुछ भी काम करता है तो वह केवल पेट भरने के लिए, बित्ति भर कपडे के लिए और मुट्ठी भर खाने के लिए है। ताल, सुर के साथ तानपुरा हाथ में लेकर वेश्या के समान नाचना केवल पेट के लिए, बित्ती भर कपडे के लिए। सन्यासी और जंगम योगी तथा पहलवान ढीठ बैरागी जैसे वेश धारण करना, ये सभी पेट के लिए, बित्ती भर कपडे के लिए। झाडियों में झुककर पत्थर पकडकर चोरी करना केवल पेट के लिए, बित्ती भर कपडे के लिए।'' इस प्रकार समाज में विविध वर्गों के विविध पेशे केवल पेट के लिए ही करते हैं। उन्होंने इस सत्य को दूसरे कीर्तन में इस प्रकार बताया है। इस कीर्तन के अंत में -

''उन्नत कागिनेले आदिकेशवुनि ध्यानमु
मनसार चेयुटा भक्तिकोसम् - परम मुक्तिकोसम'' ।। प ।।

तात्पर्य है - ''श्रेष्ठ कागिनेले आदिकेशव का ध्यान मन से करना केवल भक्ति के लिए और मुक्ति के लिए है।''

''कुलकुलमनि कोट्टुकोकंडि मी कुलमु मूलमेमैननु
तेलुसा ।। प ।।

पुट्टनि जन्मलुलेवु मेट्टनि नेललुलेवु
वंडि तिननि पदार्थमुलु लेवु
गुट्टु कन्पिंप वच्चे पेद्ददेमिटि, चिन्नदेमिटि
नेरूगा सर्वज्ञुनि स्मरिंपुमो मनुजुडा ।। 1 ।।

भक्त कनकदास के कीर्तन

कन्नड हरिदासों में कनकदास कुछ भिन्न और विशिष्टता को लिये हुए दिखाई देते हैं। वे केवल कीर्तनकार ही नहीं, बल्कि स्वयं कवि भी हैं। इस कारण उनमें द्विमुख रूपी साहित्य को देखा जा सकता है। उनमें एक है भक्ति साहित्य - कीर्तन साहित्य के रूप में, दूसरा है काव्य की रचना एक व्यक्तिनिष्ठ तथा दूसरा वस्तुनिष्ठ के रूप में।

पुरंदरदास की तरह कनकदास ने भले ही उतने कीर्तन न रचे हों, फिर भी इनके कीर्तन किसी भी हरिदास के कीर्तन से निम्न कोटि की नहीं हैं। मुख्य रूप से कनकदास, हरि भक्ति को प्रतिपादित करने वाले भक्त हैं। इसी कारण उनके कीर्तनों का अधिक भाग सर्व समर्पण भाव को लेकर दिखाई देता है। कनकदास की देशी शैली और जीवन के अनुभवों ने उन्हें एक उत्तम कीर्तनकार के रूप में खडा किया। लोक नीति, सामाजिक चेतना, आत्मनिवेदन उनके कीर्तनों में दर्शन देते हैं। पुरंदरदास की तरह कनकदास ने भी इसी टेक के साथ कीर्तनों की रचना की, जैसे ''जिस किसी ने जो भी कार्य किये हैं, वे तो अपने पेट के लिए, थोडे से कपडे के लिए और मुट्ठीभर खाने के लिए'' हैं।

''एवरेमि चेसिना पोट्टकोसमे जानेडु बट्ट कोसमे
पिडिकेडु मुद्दकोसमे ।

तालदंडिय श्रुतिमेला तंबूर चेबूनि
वेश्यवले नर्तिंचुटा पोट्टकोसम् जानेडु बट्ट कोसम्
सन्यासि जंगमबोगि जेट्टि मोंडि बैरागि
नानावेषमु लन्नियुनु पोट्टकोसम् जानेडु बट्ट कोसम्

वंगि डोंकलोन अणगि कट्टेरायि पट्टकोनि
दोंगतनमु चेयुटा पोट्टकोसम् जानेडु बट्टकोसम् ।।''

इसका अर्थ है ''कोई भी कुछ भी काम करता है तो वह केवल पेट भरने के लिए, बित्ति भर कपडे के लिए और मुट्ठी भर खाने के लिए है। ताल, सुर के साथ तानपुरा हाथ में लेकर वेश्या के समान नाचना केवल पेट के लिए, बित्ती भर कपडे के लिए। सन्यासी और जंगम योगी तथा पहलवान ढीठ बैरागी जैसे वेश धारण करना, ये सभी पेट के लिए, बित्ती भर कपडे के लिए। झाडियों में झुककर पत्थर पकडकर चोरी करना केवल पेट के लिए, बित्ती भर कपडे के लिए।'' इस प्रकार समाज में विविध वर्गों के विविध पेशे केवल पेट के लिए ही करते हैं। उन्होंने इस सत्य को दूसरे कीर्तन में इस प्रकार बताया है। इस कीर्तन के अंत में -

''उन्नत कागिनेले आदिकेशवुनि ध्यानमु
मनसार चेयुटा भक्तिकोसम् - परम मुक्तिकोसम'' ।। प ।।

तात्पर्य है - ''श्रेष्ठ कागिनेले आदिकेशव का ध्यान मन से करना केवल भक्ति के लिए और मुक्ति के लिए है।''

''कुलकुलमनि कोट्टुकोकंडि मी कुलमु मूलमेमैननु
तेलुसा ।। प ।।

पुट्टनि जन्मलुलेवु मेट्टनि नेललुलेवु
वंडि तिननि पदार्थमुलु लेवु
गुट्टु कन्पिंप वच्चे पेद्ददेमिटि, चिन्नदेमिटि
नेरूगा सर्वज्ञुनि स्मरिंपुमो मनुजुडा ।। 1 ।।

जलमे सकलकुलमुलकु तल्लिकादा
जलमु कुल मेमैना तेलियुना
बुद् बुद प्रायमटुल स्थिरमु कादी देहम्
मूलमु नेरिगि नीवेमि कंटिवि मनुजुडा ।। 2 ।।
हरिये सर्वोत्तमुडु हरिये सर्वेश्वरूडु
अंतयु हरि मयमनि तेलिसि
सिरि कागिनेले यादिकेशवरायनि
चरणकमलमुल कीर्तिंपुमो कुलजुडा'' ।। 3 ।।

इसका अर्थ है ''कुल, कुल कहते हुए आपस में लडा मत करो। क्या तुम अपने कुल का मूल जानते हो? कोई भी जन्म ऐसा नहीं है जिसमें पैदा नहीं हुए और कोई भी धरती ऐसी नहीं जिस पर ठहरे नहीं। पकाकर न खाने वाला कोई पदार्थ भी नहीं है। रहस्य जानने के लिए क्या बडा, क्या छोटा। इस कारण हे मानव! उस सर्वशक्तिमान का स्मरण करो।''

जल सभी कुलों के लिए माँ नहीं है क्या? फिर जल के कुल को कोई जानता है क्या? यह शरीर क्षण भंगुर है स्थिर नहीं है। इस मूल को जानकर भी हे मानव, आखिर तुमने क्या पाया।

हरि ही सर्वोत्तम है, हरि ही सर्वेश्वर है। सब कुछ हरिमय ही है। इस तथ्य को जानकर कागिनेले श्रीआदिकेशव जी के चरण कमलों की स्तुति करो। भगवान की सृष्टि में और दृष्टि में भला और बुरा कुछ नहीं होता, और लोगों के बीच अन्तर भी नहीं है।'' कुल के नाम से मानव में भेद - भाव न बढाने के लिए कनकदास चेतावनी देते हैं। इस प्रकार हरिभक्ति प्राप्त करने वाले ही उत्तम कुल के हैं जिसे स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा-

कुल कुल कुल वेन्नुतिहरो ।
कुलवावुदु सत्य सुजनीरिगे ।। प ।।

उपर्युक्त कीर्तन का अर्थ है ''सत्य और सुख पाने वाले मनुष्य के लिए कुल की क्या आवश्यकता है?'' इस प्रकार आश्चर्यचकित होकर पूछते हुए आगे कहते हैं कि ''कीचड में उगने वाले कमल के फूल को लाकर भगवान को क्या समर्पित नहीं कर रहे हैं? गाय के थन के मांस में उत्पन्न क्षीर को क्या भूसुर नहीं पी रहे हैं?'' आगे प्रश्न करते हैं कि ''नारायण किस कुल के है?'' आत्मा का कौन-सा कुल है? जीव का कौन-सा कुल है? तत्वेन्द्रिय के कुल को बताइये?'' कहते हुए लोगों का मुँह बंद कर देते हैं। कनकदास जी कहते हैं कि केवल पैदाहोने के कारण कुल को जानने की कोशिश नहीं करनी चाहिए बल्कि उन व्यक्तियों के संस्कारपूर्ण योग्यता के आधार पर ही उनके कुल को जाना जा सकता है।

वैदिक धर्म के नियमों को, तथा उनके आचरणों को पुरंदरदास की तरह ही कनकदास भी खंडित करते हैं। लेकिन संपूर्ण रूप से खंडित किया है यह भी नहीं कहा जा सकता है। वे दुःखित होकर कुछ कीर्तनों में कहते हैं कि इन सारे नियमों का पालन करना साध्य नहीं है।

''नेममुलेनि होममिंकेंदुलकु रामा
साममुलेनि मंत्र मिंकेंदुकु? ।। प ।।
नीटा मुनुगनेला? नारि विडुवनेला ।
वारमुन कोक्क उपवासमेला? ।।
नारसिंहुनि दिव्य नाममु तलचिना ।
घोरपातकमेल्ला तोलगि पोवुनु गदा ।। ।। 1 ।।

जलमे सकलकुलमुलकु तल्लिकादा
जलमु कुल मेमैना तेलियुना
बुद् बुद प्रायमटुल स्थिरमु कादी देहम्
मूलमु नेरिगि नीवेमि कंटिवि मनुजुडा ।। 2 ।।
हरिये सर्वोत्तमुडु हरिये सर्वेश्वरूडु
अंतयु हरि मयमनि तेलिसि
सिरि कागिनेले यादिकेशवरायनि
चरणकमलमुल कीर्तिंपुमो कुलजुडा'' ।। 3 ।।

इसका अर्थ है ''कुल, कुल कहते हुए आपस में लडा मत करो। क्या तुम अपने कुल का मूल जानते हो? कोई भी जन्म ऐसा नहीं है जिसमें पैदा नहीं हुए और कोई भी धरती ऐसी नहीं जिस पर ठहरे नहीं। पकाकर न खाने वाला कोई पदार्थ भी नहीं है। रहस्य जानने के लिए क्या बडा, क्या छोटा। इस कारण हे मानव! उस सर्वशक्तिमान का स्मरण करो।''

जल सभी कुलों के लिए माँ नहीं है क्या? फिर जल के कुल को कोई जानता है क्या? यह शरीर क्षण भंगुर है स्थिर नहीं है। इस मूल को जानकर भी हे मानव, आखिर तुमने क्या पाया।

हरि ही सर्वोत्तम है, हरि ही सर्वेश्वर है। सब कुछ हरिमय ही है। इस तथ्य को जानकर कागिनेले श्रीआदिकेशव जी के चरण कमलों की स्तुति करो। भगवान की सृष्टि में और दृष्टि में भला और बुरा कुछ नहीं होता, और लोगों के बीच अन्तर भी नहीं है।'' कुल के नाम से मानव में भेद - भाव न बढाने के लिए कनकदास चेतावनी देते हैं। इस प्रकार हरिभक्ति प्राप्त करने वाले ही उत्तम कुल के हैं जिसे स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा-

कुल कुल कुल वेन्नुतिहरो ।
कुलवावुदु सत्य सुजनीरिगे ।। प ।।

उपर्युक्त कीर्तन का अर्थ है ''सत्य और सुख पाने वाले मनुष्य के लिए कुल की क्या आवश्यकता है?'' इस प्रकार आश्चर्यचकित होकर पूछते हुए आगे कहते हैं कि ''कीचड में उगने वाले कमल के फूल को लाकर भगवान को क्या समर्पित नहीं कर रहे हैं? गाय के थन के मांस में उत्पन्न क्षीर को क्या भूसुर नहीं पी रहे हैं?'' आगे प्रश्न करते हैं कि ''नारायण किस कुल के है?'' आत्मा का कौन-सा कुल है? जीव का कौन-सा कुल है? तत्वेन्द्रिय के कुल को बताइये?'' कहते हुए लोगों का मुँह बंद कर देते हैं। कनकदास जी कहते हैं कि केवल पैदाहोने के कारण कुल को जानने की कोशिश नहीं करनी चाहिए बल्कि उन व्यक्तियों के संस्कारपूर्ण योग्यता के आधार पर ही उनके कुल को जाना जा सकता है।

वैदिक धर्म के नियमों को, तथा उनके आचरणों को पुरंदरदास की तरह ही कनकदास भी खंडित करते हैं। लेकिन संपूर्ण रूप से खंडित किया है यह भी नहीं कहा जा सकता है। वे दुःखित होकर कुछ कीर्तनों में कहते हैं कि इन सारे नियमों का पालन करना साध्य नहीं है।

''नेममुलेनि होममिंकेंदुलकु रामा
साममुलेनि मंत्र मिंकेंदुकु? ।। प ।।
नीटा मुनुगनेला? नारि विडुवनेला ।
वारमुन कोक्क उपवासमेला? ।।
नारसिंहुनि दिव्य साममु तलचिना ।
घोरपातकमेल्ला तोलगि पोवुनु गदा ।। ।। 1 ।।

अंबर तांबूलमुला विडुवनेला?
दंभमुतो नीवुंडट येला?
अंबुजनाभुनि मनसुन दलचिन
इंबुन्नदय्या वैकुंठपुरमंदु ।।''

इसका अर्थ है - ''नियमों के बिना होम आदि क्यों? राम नाम के बिना मंत्र किस लिये? नदी में डूबना क्यों? स्त्री को छोडना क्यों? हफ्ते में एक बार उपवास रखना क्यों? भगवान नारसिंह के दिव्य नाम को स्मरण करने से सारे घोर पाप टल जायेंगे न?''

आसमान समान तांबूल को छोडना क्यों? घमंड के साथ रहना क्यों? भगवान को मन से स्मरण किये बिना क्या वैकुंठ में कोई स्थान है क्या? इस तरह बाह्य नियमों के आचरण को बल देकर चलनेवाले लोगों के लिए चेतावनी देते हुए कनकदास कहते हैं कि ऐसे बाह्य आडंबरों की कोई आवश्यकता नहीं है। केवल श्रीहरि के नाम स्मरण मात्र से ही सारे पाप मिट जायेंगे। इस कीर्तन में उस समय के समाज के एवं स्वरूप स्वभाव को देखकर कनकदास क्रुद्ध होते हैं।

कन्नड कीर्तन में :

''दासनागो भवपाशनीगो वि
शेष ना गो ।। प ।।''

इस कीर्तन में कनकदास कहते हैं कि मनुष्य चाहे जप-तप, होम के नियमों का पालन कितनी बार भी क्यों न करें उससे क्या लाभ? वासुदेव नामक अंदर निहित आत्मा को पहचानो, उसे पाकर मुक्त हो जाओ, शक्तिमान हो जाओ।

कन्नड कीर्तन में -

''नालिगेय कूरिगेमाडि बित्तिरय्या
हृदय होलवनु माडि तनुवनेगिलुमाडि
पन्विरा ऐंब एरडेत्ता होडि
ज्ञान वेंबो मिणिया कण्णिहग्गवमाडि
मनवेंब ध्यानव नोडि बित्तिरय्या''

कनकदास कहते हैं कि ''धरती परिपक्व होकर जिस प्रकार शुभ परिणाम देती है, उसी प्रकार शरीर को दण्ड देने से और पवित्र मन द्वारा किये गये हरि नाम स्मरण से जीवन को सुख मिलता है।'' इस कीर्तन में मन को धान्य से तुलना करना औचित्यपूर्ण दिखाई देता है।

कनकदास द्वारा रचित तकरीबन दो सौ कीर्तनों में से बीस कीर्तनों तक तिरुमल श्रीनिवास से संबंधित कीर्तन ही हैं। इन कीर्तनों में परमात्म तत्व, दिखाई देता है। श्रीनिवास की स्तुति इस कीर्तन में देखिये।

कन्नड कीर्तन -

''एनेंदु कोंडाडि स्तुतिसुवेनोदेवा ।
नानेनु बल्ले निम्म महिमेगल माधवा ।। प ।।[7]''

इस कीर्तन में भगवान को परमात्मा के रूप में, परम ज्योति के रूप में दिखाते हुए जीवात्मा - परमात्मा के बीच भेद को प्रकट करने वाले सिद्धांत का प्रतिपादन किया गया है। ''तुम तो हरि मुकुंद हो, मैं नर जन्म का कीटाणु हूँ। परमात्मा हो तुम और मैं बुद्धिहीन।'' इस प्रकार कहते हुए

[7] श्री श्रीनिवासन हाडुगळु, सं - 2, पृ. 88

अंबर तांबूलमुला विडुवनेला?
दंभमुतो नीवुंडट येला?
अंबुजनाभुनि मनसुन दलचिन
इंबुन्नदय्या वैकुंठपुरमंदु ।।''

इसका अर्थ है - ''नियमों के बिना होम आदि क्यों? राम नाम के बिना मंत्र किस लिये? नदी में डूबना क्यों? स्त्री को छोडना क्यों? हफ्ते में एक बार उपवास रखना क्यों? भगवान नारसिंह के दिव्य नाम को स्मरण करने से सारे घोर पाप टल जायेंगे न?''

आसमान समान तांबूल को छोडना क्यों? घमंड के साथ रहना क्यों? भगवान को मन से स्मरण किये बिना क्या वैकुंठ में कोई स्थान है क्या? इस तरह बाह्य नियमों के आचरण को बल देकर चलनेवाले लोगों के लिए चेतावनी देते हुए कनकदास कहते हैं कि ऐसे बाह्य आडंबरों की कोई आवश्यकता नहीं है। केवल श्रीहरि के नाम स्मरण मात्र से ही सारे पाप मिट जायेंगे। इस कीर्तन में उस समय के समाज के एवं स्वरूप स्वभाव को देखकर कनकदास क्रुद्ध होते हैं।

कन्नड कीर्तन में :

''दासनागो भवपाशनीगो वि
शेष ना गो ।। प ।।''

इस कीर्तन में कनकदास कहते हैं कि मनुष्य चाहे जप-तप, होम के नियमों का पालन कितनी बार भी क्यों न करें उससे क्या लाभ? वासुदेव नामक अंदर निहित आत्मा को पहचानो, उसे पाकर मुक्त हो जाओ, शक्तिमान हो जाओ।

कन्नड कीर्तन में -

''नालिगेय कूरिगेमाडि बित्तिरय्या
हृदय होलवनु माडि तनुवनेगिलुमाडि
पन्विरा ऐंब एरडेत्ता होडि
ज्ञान वेंबो मिणिया कण्णिहग्गवमाडि
मनवेंब ध्यानव नोडि बित्तिरय्या''

कनकदास कहते हैं कि ''धरती परिपक्व होकर जिस प्रकार शुभ परिणाम देती है, उसी प्रकार शरीर को दण्ड देने से और पवित्र मन द्वारा किये गये हरि नाम स्मरण से जीवन को सुख मिलता है।'' इस कीर्तन में मन को धान्य से तुलना करना औचित्यपूर्ण दिखाई देता है।

कनकदास द्वारा रचित तकरीबन दो सौ कीर्तनों में से बीस कीर्तनों तक तिरुमल श्रीनिवास से संबंधित कीर्तन ही हैं। इन कीर्तनों में परमात्म तत्व, दिखाई देता है। श्रीनिवास की स्तुति इस कीर्तन में देखिये।

कन्नड कीर्तन -

''एनेंदु कोंडाडि स्तुतिसुवेनोदेवा ।
नानेनु बल्ले निम्म महिमेगल माधवा ।। प ।।[7]''

इस कीर्तन में भगवान को परमात्मा के रूप में, परम ज्योति के रूप में दिखाते हुए जीवात्मा - परमात्मा के बीच भेद को प्रकट करने वाले सिद्धांत का प्रतिपादन किया गया है। ''तुम तो हरि मुकुंद हो, मैं नर जन्म का कीटाणु हूँ। परमात्मा हो तुम और मैं बुद्धिहीन।'' इस प्रकार कहते हुए

[7]श्री श्रीनिवासन हाडुगळु, सं - 2, पृ. 88

‘‘तिरुपति वासुड श्री वेङ्कटेश नी ।
चरण सेवकुल सेवकुडनु नेनु ।।’’

उपर्युक्त कीर्तन में स्वामी की स्तुति इस प्रकार की गयी है। ‘‘तिरुपति में निवास करने वाले हे! श्रीवेङ्कटेश्वर! मैं तो तुम्हारे चरण सेवकों का सेवक हूँ।’’

इसी प्रकार कन्नड कीर्तन -

‘‘तनुनिन्नदु जीवननिन्नदु रंगा ।
अनुदिनदलि बाहोसुखदुःख निन्नदय्या ।। प ।।’’

कनकदास कहते हैं कि ‘‘उनका देह, जीवन सब कुछ श्रीनिवास का ही दिया हुआ है’’। वे अपने आप को अस्वतंत्र बताते हैं। ‘माया के वश में उलझा हुआ यह शरीर और पंचेन्द्रिय तुम्हारे ही हैं। तुम्हारे अलावा कोई जीव स्वतंत्र हो सकता है क्या?’ भगवान को प्राणेश्वर समान चुनने की भावना ही मधुर भक्ति है। अपने आप को प्रेमिका के रूप में सोचना भी भक्त के मधुर भक्ति की विशेषता है। कन्नड के कीर्तनों में मधुर भक्ति दिखाई नहीं देती। मधुर भक्ति में बताया गया है कि भगवान ही केवल एक मात्र पुरूष है बाकी सब जीव स्त्री स्वरूप हैं। लेकिन द्वैत सिद्धांत में बताया गया है कि भगवान ईश्वर है भक्त दास है। कनकदास विरचित एक कीर्तन में परोक्ष रूप से मधुर भक्ति दिखाई देती है।

‘‘रमणिकेलेले मोहना शुभकायना
अमर वंदित रविशतकोटि तेजना
विमल चरित्रदि मेरेवा श्रीकृष्णना
कमल वदन नी तोरे ।।’’

इसका अर्थ है - ‘‘कनकदास मोहन रूपी श्रीकृष्ण को उन्हें दिखाने के लिए, और स्वयं उन्हें ही गोपिका के रूप में दर्शन देने के लिए लक्ष्मी

देवी से विनती करते हैं।’’ संभव है कि कनकदास ने इसे विशिष्टाद्वैत सिद्धांत के प्रभाव में रचा हो। तब तक उन्होंने दास दीक्षा को स्वीकार नहीं किया होगा।’’[8]

इसी प्रकार कक्षों के अंतर को भी कनकदास ने परोक्ष रूप से प्रस्तावित किया -

कन्नड कीर्तन में -

‘‘सकलैश्वर्यदा शिरिदेवि निन्नरसि बहु
मुकुतियिंदलि लोका पुट्टिसुवा
शकुता निन्नहिरिया मगनु प्राणिगळमो
हकदि मरळुमाळूपकिरिया मगनिगनिनगिहनु’’

इस कीर्तन में कनकदास ने सबसे पहले स्वामी की, उसके बाद उनकी पत्नी लक्ष्मीदेवी की, उसके पश्चात् उनके पुत्र सृष्टिकर्ता ब्रह्म जी की, इस प्रकार उनके कक्षों के अंतर को बतलाया है।

और एक कन्नड कीर्तन में -

‘‘शिरिया मदवे मुकुंदा - निन्न ।
चरण सेवकना बिन्नहा पराकेलो देवा ।।’’

उपर्युक्त कीर्तन का सारांश है ‘‘मैं तो भगवान का चरण सेवक है। आखिर वे उसी की उपेक्षा क्यों कर रहें है?’’ ऐसा कहकर दुःखित होते हैं। एक और कन्नड कीर्तन में

---

[8]प्रमुख कन्नडान्ध्र वाग्गेयकारूल संकीर्तनललो तिरुमल श्रीनिवासुनि प्रशंसा - वोक परिशीलना, संस्करण 2, पृ. सं - 212

''तिरुपति वासुड श्री वेङ्कटेश नी ।
चरण सेवकुल सेवकुडनु नेनु ।।''

उपर्युक्त कीर्तन में स्वामी की स्तुति इस प्रकार की गयी है। ''तिरुपति में निवास करने वाले हे! श्रीवेङ्कटेश्वर! मैं तो तुम्हारे चरण सेवकों का सेवक हूँ।''

इसी प्रकार कन्नड कीर्तन -

''तनुनिन्नदु जीवननिन्नदु रंगा ।
अनुदिनदलि बाहोसुखदुःख निन्नदय्या ।। प ।।''

कनकदास कहते हैं कि ''उनका देह, जीवन सब कुछ श्रीनिवास का ही दिया हुआ है''। वे अपने आप को अस्वतंत्र बताते हैं। 'माया के वश में उलझा हुआ यह शरीर और पंचेन्द्रिय तुम्हारे ही हैं। तुम्हारे अलावा कोई जीव स्वतंत्र हो सकता है क्या?' भगवान को प्राणेश्वर समान चुनने की भावना ही मधुर भक्ति है। अपने आप को प्रेमिका के रूप में सोचना भी भक्त के मधुर भक्ति की विशेषता है। कन्नड के कीर्तनों में मधुर भक्ति दिखाई नहीं देती। मधुर भक्ति में बताया गया है कि भगवान ही केवल एक मात्र पुरूष है बाकी सब जीव स्त्री स्वरूप हैं। लेकिन द्वैत सिद्धांत में बताया गया है कि भगवान ईश्वर है भक्त दास है। कनकदास विरचित एक कीर्तन में परोक्ष रूप से मधुर भक्ति दिखाई देती है।

''रमणिकेलेले मोहना शुभकायना
अमर वंदित रविशतकोटि तेजना
विमल चरित्रदि मेरेवा श्रीकृष्णना
कमल वदन नी तोरे ।।''

इसका अर्थ है - ''कनकदास मोहन रूपी श्रीकृष्ण को उन्हें दिखाने के लिए, और स्वयं उन्हें ही गोपिका के रूप में दर्शन देने के लिए लक्ष्मी

देवी से विनती करते हैं।'' संभव है कि कनकदास ने इसे विशिष्टाद्वैत सिद्धांत के प्रभाव में रचा हो। तब तक उन्होंने दास दीक्षा को स्वीकार नहीं किया होगा।''[8]

इसी प्रकार कक्षों के अंतर को भी कनकदास ने परोक्ष रूप से प्रस्तावित किया -

कन्नड कीर्तन में -

''सकलैश्वर्यदा शिरिदेवि निन्नरसि बहु
मुकुतियिंदलि लोका पुट्टिसुवा
शकुता निन्नहिरिया मगनु प्राणिगळमो
हकदि मरळुमाळूपकिरिया मगनिगनिनगिहनु''

इस कीर्तन में कनकदास ने सबसे पहले स्वामी की, उसके बाद उनकी पत्नी लक्ष्मीदेवी की, उसके पश्चात् उनके पुत्र सृष्टिकर्ता ब्रह्म जी की, इस प्रकार उनके कक्षों के अंतर को बतलाया है।

और एक कन्नड कीर्तन में -

''शिरिया मदवे मुकुंदा - निन्न ।
चरण सेवकना बिन्नहा पराकेलो देवा ।।''

उपर्युक्त कीर्तन का सारांश है ''मैं तो भगवान का चरण सेवक है। आखिर वे उसी की उपेक्षा क्यों कर रहें है?'' ऐसा कहकर दुःखित होते हैं। एक और कन्नड कीर्तन में

[8]प्रमुख कन्नडान्ध्र वाग्गेयकारूल संकीर्तनललो तिरुमल श्रीनिवासुनि प्रशंसा - वोक परिशीलना, संस्करण 2, पृ. सं - 212

''नीन्याको निन्नहंग्याको निन्न नामदा बलवोंदिद्दरे साको''
।। प ।।

इस कीर्तन में कहा गया है कि ''तुम्हारी क्या आवश्यकता है, तुम्हारी कृपा की क्या आवश्यकता है, केवल तुम्हारे नाम का बल हो तो पर्याप्त है। उक्त कीर्तन में दया शब्द महान अर्थ को सूचित करता है। हाथी (गजेन्द्र), जब मगरमच्छ के चंगुल में फँस गया था, तब हरि नाम ने ही उसकी रक्षा की। प्रह्लाद को जब उसके पिता ने यातनायें दी, उस समय भी हरि नाम ने ही उनकी रक्षा की थी। द्रौपदी का जब वस्त्रापहरण हो रहा था, तब कृष्ण के नाम ने ही उसकी रक्षा की थी। इस प्रकार तुम्हारे नाम का समतुल्य इस जगत में कोई और नहीं है'' कहते हुए, कनकदास अनेक उदाहरण देते हैं।

कनकदास ने अपने कीर्तनों में संग्रह रामायण का वर्णन भी किया है। 'माडय्या निन्नदासरा...कृपगळनु'- इस कन्नड कीर्तन में रावण और कुंभकर्ण का संहार कर विभीषण को राज्याभिषेक करने वाले श्रीराम के शरण की प्रार्थना करते हैं। इसमें कनकदास ने सीतापहरण से लेकर विभीषण के राज्याभिषेक तक की घटनाओं को प्रस्तावित किया।

''सीतेयनु कद्दु ओय्दवना कोल्लुवभरदि
भूतळदा कपिगळनु कूडिकोंडु
सेतुवेयकट्टि शरनिधिदाटि बरलागा
चेतनदा रावणेश्वर कुंभकर्णसा
त्वातिशया रक्कसरा इरि दोरगिसि
मातुलालिसि विभीषणगे पट्टवनित्ता!
दाता रघुनाधने शरणेंबेनु''

उसी प्रकार भागवत में श्रीकृष्ण की लीलाओं को इस कीर्तन में प्रस्तुत किया गया है -

''विकटमुगा पूतननि चंपि
शकटासुरूनि पादमुतो त्रोक्कि
दिकुटधिकुट अनुचु
अक्करतो नर्तिंचुचु नेगे निंटिकि
गोवर्धन पर्वतमु नेत्ति
गोवुल काचे, तना
माम कंसुनि चंपि
आतनितो गूडि पाडुचु नेगे निंटिकि''

इस कीर्तन का सारांश है - ''बाल्यकाल में ही श्रीकृष्ण पूतना का संहार कर, शकटासुर को अपने चरणों से दबाकर, नृत्यु करते हुए घर चल पडे। गोवर्धन पर्वत को अपनी ऊँगली पर उठाकर, गायों की रक्षा की। उसके बाद मामा कंस का संहार कर, गाते हुए घर की ओर चल पडे।'' एक और कीर्तन में रामायण, महाभारत, भागवत इन तीनों के मिश्रण को चार पादों में अपने कीर्तन में कनकदास ने दिखाया है यथा -

''शिलनु सतिगजेसि शुद्धि चेसिनपादमु
मेच्चि पार्थुनि रथमुनडिपिन पादमु
कलि सुयोधनुनि ओलगमुनुंडि कूल्चिन पादमु
मधिंचि काळिंगुनि पडग त्रोक्किन पादमुनु''

इस कीर्तन का सारांश है - ''पत्थर को सती के रूप में परिवर्तित कर उन्हें शुद्ध बनाने वाला चरण यही है। अर्जुन को चाहकर उनका

''नीन्याको निन्नहंग्याको निन्न नामदा बलवोंदिद्दरे साको''
।। प ।।

इस कीर्तन में कहा गया है कि ''तुम्हारी क्या आवश्यकता है, तुम्हारी कृपा की क्या आवश्यकता है, केवल तुम्हारे नाम का बल हो तो पर्याप्त है। उक्त कीर्तन में दया शब्द महान अर्थ को सूचित करता है। हाथी (गजेन्द्र), जब मगरमच्छ के चंगुल में फँस गया था, तब हरि नाम ने ही उसकी रक्षा की। प्रह्लाद को जब उसके पिता ने यातनायें दी, उस समय भी हरि नाम ने ही उनकी रक्षा की थी। द्रौपदी का जब वस्त्रापहरण हो रहा था, तब कृष्ण के नाम ने ही उसकी रक्षा की थी। इस प्रकार तुम्हारे नाम का समतुल्य इस जगत में कोई और नहीं है'' कहते हुए, कनकदास अनेक उदाहरण देते हैं।

कनकदास ने अपने कीर्तनों में संग्रह रामायण का वर्णन भी किया है। 'माडय्या निन्नदासरा...कृपगळनु'- इस कन्नड कीर्तन में रावण और कुंभकर्ण का संहार कर विभीषण को राज्याभिषेक करने वाले श्रीराम के शरण की प्रार्थना करते हैं। इसमें कनकदास ने सीतापहरण से लेकर विभीषण के राज्याभिषेक तक की घटनाओं को प्रस्तावित किया।

''सीतेयनु कद्दु ओय्दवना कोल्लुवभरदि
भूतळदा कपिगळनु कूडिकोंडु
सेतुवेयकट्टि शरनिधिदाटि बरलागा
चेतनदा रावणेश्वर कुंभकर्णसा
त्वातिशया रक्कसरा इरि दोरगिसि
मातुलालिसि विभीषणगे पट्टवनित्ता!
दाता रघुनाधने शरणेंबेनु''

उसी प्रकार भागवत में श्रीकृष्ण की लीलाओं को इस कीर्तन में प्रस्तुत किया गया है -

''विकटमुगा पूतननि चंपि
शकटासुरूनि पादमुतो त्रोक्कि
दिकुटधिकुट अनुचु
अक्करतो नर्तिंचुचु नेगे निंटिकि
गोवर्धन पर्वतमु नेत्ति
गोवुल काचे, तना
माम कंसुनि चंपि
आतनितो गूडि पाडुचु नेगे निंटिकि''

इस कीर्तन का सारांश है - ''बाल्यकाल में ही श्रीकृष्ण पूतना का संहार कर, शकटासुर को अपने चरणों से दबाकर, नृत्यु करते हुए घर चल पडे। गोवर्धन पर्वत को अपनी ऊँगली पर उठाकर, गायों की रक्षा की। उसके बाद मामा कंस का संहार कर, गाते हुए घर की ओर चल पडे।'' एक और कीर्तन में रामायण, महाभारत, भागवत इन तीनों के मिश्रण को चार पादों में अपने कीर्तन में कनकदास ने दिखाया है यथा -

''शिलनु सतिगजेसि शुद्धि चेसिनपादमु
मेच्चि पार्थुनि रथमुनडिपिन पादमु
कलि सुयोधनुनि ओलगमुनुंडि कूल्चिन पादमु
मधिंचि काळिंगुनि पडग त्रोक्किन पादमुनु''

इस कीर्तन का सारांश है - ''पत्थर को सती के रूप में परिवर्तित कर उन्हें शुद्ध बनाने वाला चरण यही है। अर्जुन को चाहकर उनका

सारथी बनकर, रथ चलानेवाला चरण भी यही है। सुयोधन को सभा से निकालने वाला भी यही चरण है। काळिंदी नाग के फणों पर नाचने वाले चरण भी यही हैं।'' इस कीर्तन में पहला पाद रामायण से संबंधित है। दूसरा और तीसरा महाभारत से संबंधित है तथा चौथा पाद भागवत कथा से संबंधित है।

कनकदास द्वारा प्रयोग किये गये रूपक और उपमा अलंकारों की कमी नहीं है।

''स्तनमुलु कलशमुलु देहलावण्यरसमे तैलमु
वनजाक्षुल भुजमुले दंडमुलु
घनमैन कांतिगल माणिक्यांगुलीयकमुला
व्रेळुलतो दीपमुलु शोभिंचिनवि''

इस कीर्तन का सारांश है - ''उन सुन्दरियों के स्तन ही तेल से भरे हुए कलश हैं। उनका देह रूपी लावण्य रस ही तेल है। उनकी भजाएँ सुंदर और दृढ़ है; मणिक की अंगूठी की महान कांति दीप समान अत्यंत शोभित है।'' यह अद्भुत रूपक अलंकार है।

इसी प्रकार एक और रूपक अलंकार देखिए -

''बालिकगोंतु बंगारू रोलु सुस्वरमे चेरकुगणुपु
कुरूला ओंपुल कत्तेरलु कुंभमुलु
पालुनिंडिन कुचमुलु निडुपाटि
कंटि आलि चिप्पलु शोभिंचिनवि''

इस कीर्तन का अर्थ है ''बालिकाओं के गले ओखले के समान हैं। उनकी मधुर ध्वनि ही गन्ने की खनी है। घुँघराले बाल विनोदभरे कैंची

समान है। दूध से भरे हुए स्तन ही कलश हैं। विशाल आँखे सीपियों की तरह सुंदर हैं।''

''रति देवी के शरीर पर स्वर्ण केतकी पुष्प समान गर्भ चिह्न दिखाई दिये। उस सुंदरांगी के दांतों का मंदहास, कुंद पुष्प जैसे आँखों को आह्लादित कर रहे हैं।'' इस प्रकार के उपमा अलंकारों का प्रयोग कर, काव्य की शोभा को बढ़ाया है।

'नल चरित्र' में नल को साँप द्वारा डस लेने के उपरांत, नल के रूप का वर्णन सहज एवं सरल भाषा में कनकदास ने वर्णन किया। देखिये-

''पेद्द पोट्टा, गूनि वीपु
अड्डड दिड्डमगु मोगमु मुडिवडिन मुक्कु
पेद्द कालुसेतुलु रालिन रोममीसमुलु
मंदमैना देहमु बोंगुरूगोंतु
कुब्ज रूपमु बविरिगड्डमु
मोहुवले कुरूपिगा नृपतियुंडे विषमुतोकूडि''

इसका सारांश है - ''बडा-सा पेट, कुबडा पीट, टेढा-मेढा मुँह और टेढ़ी नाक, बडे - बडे हाथ - पैर, झडी हुई मूँछे, मोटा कद, भर्राती आवाज, कुबडा रूप, अस्तव्यस्त घना दाढ़ी। साँप के विष के कारण इस रूप के साथ वह राजा कुरूप बन गये हैं।'' यह स्वभावोक्ति अलंकार के लिए अच्छा उदाहरण है।

कनकदास की रचनाओं में मुंडिगे (पहेलियाँ) अत्यंत प्रशस्ति को पा चुकी हैं। वेद काल के समय से लेकर इस प्रकार की रचनाओं के लिए एक सम्प्रदाय रहा है। वहाँ इस प्रकार की रचनाओं को 'प्रवह्लिता' नाम से जाना जाता है। बौद्धों में इसे ''संधा भाषा'' की संज्ञा दी गयी है। इस

सारथी बनकर, रथ चलानेवाला चरण भी यही है। सुयोधन को सभा से निकालने वाला भी यही चरण है। काळिंदी नाग के फणों पर नाचने वाले चरण भी यही हैं।'' इस कीर्तन में पहला पाद रामायण से संबंधित है। दूसरा और तीसरा महाभारत से संबंधित है तथा चौथा पाद भागवत कथा से संबंधित है।

कनकदास द्वारा प्रयोग किये गये रूपक और उपमा अलंकारों की कमी नहीं है।

''स्तनमुलु कलशमुलु देहलावण्यरसमे तैलमु
वनजाक्षुल भुजमुले दंडमुलु
घनमैन कांतिगल माणिक्यांगुलीयकमुला
व्रेळुलतो दीपमुलु शोभिंचिनवि''

इस कीर्तन का सारांश है - ''उन सुन्दरियों के स्तन ही तेल से भरे हुए कलश हैं। उनका देह रूपी लावण्य रस ही तेल है। उनकी भजाएँ सुंदर और दृढ़ है; मणिक की अंगूठी की महान कांति दीप समान अत्यंत शोभित है।'' यह अद्भुत रूपक अलंकार है।

इसी प्रकार एक और रूपक अलंकार देखिए -

''बालिकगोंतु बंगारू रोलु सुस्वरमे चेरकुगणुपु
कुरूला ओंपुल कत्तेरलु कुंभमुलु
पालुनिंडिन कुचमुलु निडुपाटि
कंटि आलि चिप्पलु शोभिंचिनवि''

इस कीर्तन का अर्थ है ''बालिकाओं के गले ओखले के समान हैं। उनकी मधुर ध्वनि ही गन्ने की खनी है। घुँघराले बाल विनोदभरे कैंची

समान है। दूध से भरे हुए स्तन ही कलश हैं। विशाल आँखे सीपियों की तरह सुंदर हैं।''

''रति देवी के शरीर पर स्वर्ण केतकी पुष्प समान गर्भ चिह्न दिखाई दिये। उस सुंदरांगी के दांतों का मंदहास, कुंद पुष्प जैसे आँखों को आह्लादित कर रहे हैं।'' इस प्रकार के उपमा अलंकारों का प्रयोग कर, काव्य की शोभा को बढ़ाया है।

'नल चरित्र' में नल को साँप द्वारा डस लेने के उपरांत, नल के रूप का वर्णन सहज एवं सरल भाषा में कनकदास ने वर्णन किया। देखिये-

''पेद्द पोट्टा, गूनि वीपु
अड्ड दिड्डमगु मोगमु मुडिवडिन मुक्कु
पेद्द कालुसेतुलु रालिन रोममीसमुलु
मंदमैना देहमु बोंगुरूगोंतु
कुब्ज रूपमु बविरिगड्डमु
मोट्टुवले कुरूपिगा नृपतियुंडे विषमुतोकूडि''

इसका सारांश है - ''बडा-सा पेट, कुबडा पीट, टेढा-मेढा मुँह और टेढ़ी नाक, बडे - बडे हाथ - पैर, झडी हुई मूँछे, मोटा कद, भर्राती आवाज, कुबडा रूप, अस्तव्यस्त घना दाढ़ी। साँप के विष के कारण इस रूप के साथ वह राजा कुरूप बन गये हैं।'' यह स्वभावोक्ति अलंकार के लिए अच्छा उदाहरण है।

कनकदास की रचनाओं में मुंडिगे (पहेलियाँ) अत्यंत प्रशस्ति को पा चुकी हैं। वेद काल के समय से लेकर इस प्रकार की रचनाओं के लिए एक सम्प्रदाय रहा है। वहाँ इस प्रकार की रचनाओं को 'प्रवह्लिता' नाम से जाना जाता है। बौद्धों में इसे ''संधा भाषा'' की संज्ञा दी गयी है। इस

प्रकार गोपनीयता से, गूढ़ रूप से तथा रहस्य रूप से कहने की विधा को 'बेडगु', 'पहेली', 'मुंडिगे', 'भारूडा', 'प्रहेलिका' आदि नामों से जाना जाता है। वचनकार इसे 'बेडिगिन वचनालु' (पहेली वचन) कहकर पुकारते हैं तो हरिदास लोगों में 'मुंडिगे' (पहेली) का नाम प्रसिद्ध है।''

लोक साहित्य में पहेलियों की तरह ही ये पहेलियाँ भी बुद्धि प्रदर्शन के लिए उदाहरण रूप में प्रस्तुत हैं। महाभारत के यक्ष प्रश्न, ग्रीक पुराण में स्फिक्स, राक्षस द्वारा सामना की गयी समस्याएँ, बेताल पंचविंशती में बेताल के प्रश्न इस क्रम में आते हैं। अल्लम प्रभू के द्वारा रचित बेडगिन वचनालु (पहेली वचन) ने कन्नड साहित्य में प्रमुख स्थान पाया है। यही शायद हरिदासों के लिए स्फूर्तिदायक रहे होंगे। हरिदासों में इस प्रकार की पहेलियाँ रचनेवालों में प्रमुख रूप से कनकदास, पुरंदरदास, प्रसन्न वेङ्कटदास, गोपालदास प्रमुख हैं। इन सबमें कनकदास ने अत्यधिक संख्या में पहेलियों को रचा है। ''अब तक सही अर्थ को न कह सकने की, तत्वभूयिष्ट, अन्यार्थ प्रधान पहेलियाँ सब मिलाकर कनकदास की ''मुंडिगे'' (पहेलियाँ) की संख्या तकरीबन दस-पन्द्रह तक हो सकती हैं। उनमें से कुछ ही पंडित लोग बहुत कम रचनाओं के लिए ही विवरण दे पाये हैं।[9]

पहेली में ललकारने वाला गुण रहता है। उसे समझाने पर ही समाधान प्राप्त होता है। इसमें बुद्धि की प्रधानता होती है। मुंडिगे (पहेली) में भी यही तत्व दिखायी देती है।

[9]कनकदास, पृ. 69, टी. एस. नागरत्न

तेलुगु अनुवाद -

''चेट्टुनु म्रिंगे पक्षि इंटिलोनिकि जोरबडिनदि दीनि
गुर्तु चेप्पुडु कूर्चुन्न जनुलु ।। प ।।
ओंटिकोम्मु पक्षि ओडलंदु करूण लेदु
गोंतुलु मूडुन्नवि मुक्कुलेदु
कुंटिमनिषि लागा कूर्चुन्नदि इंटिलोना
अष्टादशल अन्नान्नि भक्षिस्तुंदि
पलुकुचु तिनुचु नडिनेत्तिन नोरू
कडुनादपु गानमु चेयुचुन्नदि
अडविलोन पुट्टुनु विडिरेंडगुनु
पेदतनमु वच्चिन अतिगा रक्षिंचुनु
कंजवदनुल हस्तमुन नर्तिंचुनु
येंगिलि तिनिपिंचुनु मुञ्जगमुलकु
रंजिंचेडि रत्नसिंहासनमु मदि
कुंजर वरदादि केशवुडु ता नेरूगुनु''

हिन्दी अनुवाद -

''वृक्ष को निगलनेवाली पक्षी घर के अंदर घुस गयी है।
हे जन! क्या इसे आपने पहचाना?
एक सींग वाली पक्षी के शरीर में दया नहीं है
कंठ तीन हैं नाक नहीं है
लंगडे की तरह बैठी है घर के अंदर
अष्टादश खाना खा लेती है
बोलते, खाते सिर के ऊपर मुँह

प्रकार गोपनीयता से, गूढ़ रूप से तथा रहस्य रूप से कहने की विधा को 'बेडगु', 'पहेली', 'मुंडिगे', 'भारूडा', 'प्रहेलिका' आदि नामों से जाना जाता है। वचनकार इसे 'बेडिगिन वचनालु' (पहेली वचन) कहकर पुकारते हैं तो हरिदास लोगों में 'मुंडिगे' (पहेली) का नाम प्रसिद्ध है।''

लोक साहित्य में पहेलियों की तरह ही ये पहेलियाँ भी बुद्धि प्रदर्शन के लिए उदाहरण रूप में प्रस्तुत हैं। महाभारत के यक्ष प्रश्न, ग्रीक पुराण में स्फिंक्स, राक्षस द्वारा सामना की गयी समस्याएँ, बेताल पंचविंशती में बेताल के प्रश्न इस क्रम में आते हैं। अल्लम प्रभू के द्वारा रचित बेडगिन वचनालु (पहेली वचन) ने कन्नड साहित्य में प्रमुख स्थान पाया है। यही शायद हरिदासों के लिए स्फूर्तिदायक रहे होंगे। हरिदासों में इस प्रकार की पहेलियाँ रचनेवालों में प्रमुख रूप से कनकदास, पुरंदरदास, प्रसन्न वेङ्कटदास, गोपालदास प्रमुख हैं। इन सबमें कनकदास ने अत्यधिक संख्या में पहेलियों को रचा है। ''अब तक सही अर्थ को न कह सकने की, तत्वभूयिष्ट, अन्यार्थ प्रधान पहेलियाँ सब मिलाकर कनकदास की ''मुंडिगे'' (पहेलियाँ) की संख्या तकरीबन दस-पन्द्रह तक हो सकती हैं। उनमें से कुछ ही पंडित लोग बहुत कम रचनाओं के लिए ही विवरण दे पाये हैं।[9]

पहेली में ललकारने वाला गुण रहता है। उसे समझाने पर ही समाधान प्राप्त होता है। इसमें बुद्धि की प्रधानता होती है। मुंडिगे (पहेली) में भी यही तत्व दिखायी देती है।

[9]कनकदास, पृ. 69, टी. एस. नागरत्न

तेलुगु अनुवाद -

''चेट्टुनु म्रिंगे पक्षि इंटिलोनिकि जोरबडिनदि दीनि
गुर्तु चेप्पुडु कूर्चुन्न जनुलु ।। प ।।
ओंटिकोम्मु पक्षि ओडलंदु करूण लेदु
गोंतुलु मूडुन्नवि मुक्कुलेदु
कुंटिमनिषि लागा कूर्चुन्नदि इंटिलोना
अष्टादशल अन्नान्नि भक्षिस्तुंदि
पलुकुचु तिनुचु नडिनेत्तिन नोरू
कडुनादपु गानमु चेयुचुन्नदि
अडविलोन पुट्टुनु विडिरेंडगुनु
पेदतनमु वच्चिन अतिगा रक्षिंचुनु
कंजवदनुल हस्तमुन नर्तिंचुनु
येंगिलि तिनिपिंचुनु मुञ्जगमुलकु
रंजिंचेडि रत्नसिंहासनमु मदि
कुंजर वरदादि केशवुडु ता नेरूगुनु''

हिन्दी अनुवाद -

''वृक्ष को निगलनेवाली पक्षी घर के अंदर घुस गयी है।
हे जन! क्या इसे आपने पहचाना?
एक सींग वाली पक्षी के शरीर में दया नहीं है
कंठ तीन हैं नाक नहीं है
लंगडे की तरह बैठी है घर के अंदर
अष्टादश खाना खा लेती है
बोलते, खाते सिर के ऊपर मुँह

नाद पूर्ण गान कर रही है
जंगल में जन्म लेकर दो भागों में बँट जाती है
गरीबी आने से अत्यधिक रक्षा करती है
कंजवदन के हाथों में नाचती है
तीनों लोकों को जूठन खिलाती है।
सुख पहुँचाने वाले रत्नसिंहासन पर विराजित है
कुंजर वरदादी केशव जानते हैं''

इस पहेली का अर्थ या समाधान है 'चक्की'। यहाँ एक सींग का अर्थ लकडी का खूंट है। कंज वदन के हाथों में नृत्य करते हुए तीनों लोकों को जूठन खिलाने वाली चक्की गरीबों की रक्षा करती है। ''भाव से अधिक बुद्धि के लिए व्यायाम है, काव्य से अधिक तत्व को प्रधानता देनेवाली कनकदास की पहेलियाँ आज भी पंडितों के सामने प्रश्न बनकर रह गये हैं।''[10] चक्की का वर्णन रूपकों के आधार पर कनकदास ने वर्णन किया है जैसे लंगडे समान बैठी है, नादपूर्ण गान करना, ये सब लोक साहित्य की कल्पना के निकट दिखाई देते हैं। इस तरह कनकदास द्वारा रचित मुंडिगेलु (पहेलियाँ) हरिदास साहित्य में विशिष्ट स्थान पा चुकी हैं।

* * *

[10]कनकदास, पृ. 70, टी. एस. नागरत्न

भक्त कनकदास के कीर्तन - लोक संबंधी विभिन्न धारणायें

दास कवियों द्वारा समर्पित दास साहित्य 14 वीं शताब्दी में जो प्रारंभ हुआ वह समाज के लिए उत्तम भेंट साबित हुआ। श्रीपादराय द्वारा प्रारंभ किया गया यह साहित्य 18-19 सदियों तक प्रवाहित रहा। उनके द्वारा प्रारंभ किया गया यह साहित्य पुरंदरदास, कनकदास के हाथों से उत्तम प्रक्रिया के रूप में विकसित हुआ। मौखिक सम्प्रदाय में विकसित होकर, लोक साहित्य के अंशों को भी अध्ययन करने की प्रेरणा दी। इनके कीर्तन लोक गीत जैसे ही दिखाई देती हैं। इसका कारण है उनके गीत साधारण जनों को दृष्टि में रखकर ही रची गयी हैं। मध्व धर्म के तत्वों को साधारण जनों तक इन कीर्तनों द्वारा पहुँचाने की इच्छा इनके कीर्तनों के द्वारा दृष्टिगोचर होती है।

कनकदास के कीर्तनों में लोक संबंधी विज्ञान परक कई अंश दर्शन देते हैं। चाहे कोई भी कवि हो, या कीर्तनाचार्य हो, सभी लोग समाज से अत्यंत निकट संबंध ही रखते हैं। लोक साहित्य के तत्व तो हर एक मनुष्य में दर्शन देते हैं। अपने परिसर प्रांतों की संस्कृति एवं सम्प्रदायों को, रूढ़िगत विश्वासों को अपनी रचनाओं के आधार पर दिखाने का प्रयास नन्नय्या कवि के समय से ही हम देखते आ रहे हैं।

लोक संबंधी विज्ञान, विश्व कोश जैसा होता है। उसमें सभी विषय समाहित हो जाते हैं। इसी प्रकार के लोक संबंधी अंशों को ही कनकदास ने ग्रहण कर अपने कीर्तनों में व्यक्त किया है। लोक गीतों की शैली, आचार-व्यवहार, वस्तु संस्कृति, लोक कलाएँ, भाषा आदि सभी कनकदास के कीर्तनों में दर्शन देते हैं। पुरंदरदास की तरह कनकदास ने भी अपने

नाद पूर्ण गान कर रही है
जंगल में जन्म लेकर दो भागों में बँट जाती है
गरीबी आने से अत्यधिक रक्षा करती है
कंजवदन के हाथों में नाचती है
तीनों लोकों को जूठन खिलाती है।
सुख पहुँचाने वाले रत्नसिंहासन पर विराजित है
कुंजर वरदादी केशव जानते हैं''

इस पहेली का अर्थ या समाधान है 'चक्की'। यहाँ एक सींग का अर्थ लकडी का खूंट है। कंज वदन के हाथों में नृत्य करते हुए तीनों लोकों को जूठन खिलाने वाली चक्की गरीबों की रक्षा करती है। ''भाव से अधिक बुद्धि के लिए व्यायाम है, काव्य से अधिक तत्व को प्रधानता देनेवाली कनकदास की पहेलियाँ आज भी पंडितों के सामने प्रश्न बनकर रह गये हैं।''[10] चक्की का वर्णन रूपकों के आधार पर कनकदास ने वर्णन किया है जैसे लंगडे समान बैठी है, नादपूर्ण गान करना, ये सब लोक साहित्य की कल्पना के निकट दिखाई देते हैं। इस तरह कनकदास द्वारा रचित मुंडिगेलु (पहेलियाँ) हरिदास साहित्य में विशिष्ट स्थान पा चुकी हैं।

* * *

[10]कनकदास, पृ. 70, टी. एस. नागरत्न

भक्त कनकदास के कीर्तन - लोक संबंधी विभिन्न धारणायें

दास कवियों द्वारा समर्पित दास साहित्य 14 वीं शताब्दी में जो प्रारंभ हुआ वह समाज के लिए उत्तम भेंट साबित हुआ। श्रीपादराय द्वारा प्रारंभ किया गया यह साहित्य 18-19 सदियों तक प्रवाहित रहा। उनके द्वारा प्रारंभ किया गया यह साहित्य पुरंदरदास, कनकदास के हाथों से उत्तम प्रक्रिया के रूप में विकसित हुआ। मौखिक सम्प्रदाय में विकसित होकर, लोक साहित्य के अंशों को भी अध्ययन करने की प्रेरणा दी। इनके कीर्तन लोक गीत जैसे ही दिखाई देती हैं। इसका कारण है उनके गीत साधारण जनों को दृष्टि में रखकर ही रची गयी हैं। मध्व धर्म के तत्वों को साधारण जनों तक इन कीर्तनों द्वारा पहुँचाने की इच्छा इनके कीर्तनों के द्वारा दृष्टिगोचर होती है।

कनकदास के कीर्तनों में लोक संबंधी विज्ञान परक कई अंश दर्शन देते हैं। चाहे कोई भी कवि हो, या कीर्तनाचार्य हो, सभी लोग समाज से अत्यंत निकट संबंध ही रखते हैं। लोक साहित्य के तत्व तो हर एक मनुष्य में दर्शन देते हैं। अपने परिसर प्रांतों की संस्कृति एवं सम्प्रदायों को, रूढ़िगत विश्वासों को अपनी रचनाओं के आधार पर दिखाने का प्रयास नन्नय्या कवि के समय से ही हम देखते आ रहे हैं।

लोक संबंधी विज्ञान, विश्व कोश जैसा होता है। उसमें सभी विषय समाहित हो जाते हैं। इसी प्रकार के लोक संबंधी अंशों को ही कनकदास ने ग्रहण कर अपने कीर्तनों में व्यक्त किया है। लोक गीतों की शैली, आचार-व्यवहार, वस्तु संस्कृति, लोक कलाएँ, भाषा आदि सभी कनकदास के कीर्तनों में दर्शन देते हैं। पुरंदरदास की तरह कनकदास ने भी अपने

कीर्तनों में सामाजिक अंशों के साथ - साथ लोक संबंधी अंशों को भी जोडकर भक्ति के प्रचार के साथ - साथ उपदेशों को भी प्रस्तुत करना उनके कीर्तनों में हम देख सकते हैं। इस प्रकार के कुछ अंशों का विश्लेषण यहाँ करेंगे।

सुख-दुःख में भाग लेने की प्रवृत्ति लोक साहित्य में दिखाई देती है। आत्मीयता का प्रदर्शन करना तो लगता है जैसे ग्रामीण लोग ही जानते हैं। रामायण संबंधी कीर्तन में एक जगह कनकदास कहते हैं -

कन्नड में -

''एन्नकंद हळ्ळिया हनुमा
चेन्नाग इहरे लक्ष्मणदेवरू'' ॥ प ॥

तेलुगु अनुवाद -

''ना कंद पल्लेहनुमा
बागुग नुन्नारा लक्ष्मणदेवुलु ॥ प ॥
घृतपंचामृतमु लानाडु अडविदुंप लीनाडु
कर्पूर वीड्यमु लानाडु मसिबोग्गुनेडु
पूलपान्पु आ नाडु गड्डिपरूवुनेडु
श्रीपति राघवुलु क्षेममुगनुन्नारा ॥ 1 ॥
नववस्त्रमु लानाडु नारचीरलु नेडु
पूल जडा लानाडु जटलु ईनाडु
जव्वाजि कस्तूरि अंदु विभूतिरेणुवु लिंदु
श्री वर राघवुलु क्षेममुग नुन्नारा ॥ 2 ॥

कनक रथमु लानाडु कालिनडक नेडु
घनछत्रमु लानाडु सूर्यतापमु नेडु
सनकादिमुनुलु सेविंचु आदिकेशव मा
हनुमेश राघवुलु क्षेममुग नुन्नारा ॥3 ॥''

इसका सारांश है ''अशोक वन में अकेली बैठी सीता देवी को जब हनुमान दिखायी दिये तब उनमें उनके प्रति प्रीति एवं विश्वास जग उठी। इस स्थिति को कनकदास ने अपने कीर्तन में दर्शाया। सीता देवी अपने रिश्तेदारों के कुशल - क्षेम संबंधी समाचार को जानने के प्रयत्न में हनुमान के प्रति जिस आत्मीयता को सीता देवी ने दिखाया है वह इस कीर्तन के द्वारा मालूम पड़ती है। उन्होंने 'हनुमा' कहकर संबोधित किया। इस संबोधन में ही सीता देवी की आत्मीयता स्पष्ट होती है। सीता देवी ने सबसे पहले श्रीराम के कुशल समाचार को न पूछकर, फ़िर पूछती है कि लक्ष्मण देव अच्छे हैं क्या? इस प्रकार से पूछने में ही यह दर्शित होता है कि लक्ष्मण जी की बातों को न सुनने के कारण ही उनकी यह दुर्दशा हुई है, श्रीराम की बातों को नकार कर छोटा भाई सीता देवी को छोडकर जाने के कारण, श्रीराम ने लक्ष्मण के प्रति कैसा बरताव किया है, उन सब बातों को जानने का उतावलापन सीतादेवी में व्यक्त होता है। कीर्तन के बाकी सभी चरणों में श्रीराम के कुशल समाचार को सीतादेवी ने पूछा। एक स्त्री की मानसिक दशा को यह कीर्तन सूचित करता है।

लोक संबंधी शैली में अत्यंत सुन्दरता के साथ दशावतार का चित्रण हमारे सामने कनकदास ने प्रस्तुत किया है।

कन्नड में -

देवी नम्मद्यावरू बंदरू बन्निरे ॥ प ॥

कीर्तनों में सामाजिक अंशों के साथ - साथ लोक संबंधी अंशों को भी जोडकर भक्ति के प्रचार के साथ - साथ उपदेशों को भी प्रस्तुत करना उनके कीर्तनों में हम देख सकते हैं। इस प्रकार के कुछ अंशों का विश्लेषण यहाँ करेंगे।

सुख-दुःख में भाग लेने की प्रवृत्ति लोक साहित्य में दिखाई देती है। आत्मीयता का प्रदर्शन करना तो लगता है जैसे ग्रामीण लोग ही जानते हैं। रामायण संबंधी कीर्तन में एक जगह कनकदास कहते हैं -

कन्नड में -

''एन्नकंद हळ्ळिया हनुमा
चेन्नाग इहरे लक्ष्मणदेवरू'' ॥ प ॥

तेलुगु अनुवाद -

''ना कंद पल्लेहनुमा
बागुग नुन्नारा लक्ष्मणदेवुलु ॥ प ॥
घृतपंचामृतमु लानाडु अडविदुंप लीनाडु
कर्पूर वीड्यमु लानाडु मसिबोग्गुनेडु
पूलपान्पु आ नाडु गड्डिपरूवुनेडु
श्रीपति राघवुलु क्षेममुगनुन्नारा ॥ 1 ॥
नववस्त्रमु लानाडु नारचीरलु नेडु
पूल जडा लानाडु जटलु ईनाडु
जव्वाजि कस्तूरि अंदु विभूतिरेणुवु लिंदु
श्री वर राघवुलु क्षेममुग नुन्नारा ॥ 2 ॥

कनक रथमु लानाडु कालिनडक नेडु
घनछत्रमु लानाडु सूर्यतापमु नेडु
सनकादिमुनुलु सेविंचु आदिकेशव मा
हनुमेश राघवुलु क्षेममुग नुन्नारा ॥3 ॥''

इसका सारांश है ''अशोक वन में अकेली बैठी सीता देवी को जब हनुमान दिखायी दिये तब उनमें उनके प्रति प्रीति एवं विश्वास जग उठी। इस स्थिति को कनकदास ने अपने कीर्तन में दर्शाया। सीता देवी अपने रिश्तेदारों के कुशल - क्षेम संबंधी समाचार को जानने के प्रयत्न में हनुमान के प्रति जिस आत्मीयता को सीता देवी ने दिखाया है वह इस कीर्तन के द्वारा मालूम पड़ती है। उन्होंने 'हनुमा' कहकर संबोधित किया। इस संबोधन में ही सीता देवी की आत्मीयता स्पष्ट होती है। सीता देवी ने सबसे पहले श्रीराम के कुशल समाचार को न पूछकर, फ़िर पूछती है कि लक्ष्मण देव अच्छे हैं क्या? इस प्रकार से पूछने में ही यह दर्शित होता है कि लक्ष्मण जी की बातों को न सुनने के कारण ही उनकी यह दुर्दशा हुई है, श्रीराम की बातों को नकार कर छोटा भाई सीता देवी को छोडकर जाने के कारण, श्रीराम ने लक्ष्मण के प्रति कैसा बरताव किया है, उन सब बातों को जानने का उतावलापन सीतादेवी में व्यक्त होता है। कीर्तन के बाकी सभी चरणों में श्रीराम के कुशल समाचार को सीतादेवी ने पूछा। एक स्त्री की मानसिक दशा को यह कीर्तन सूचित करता है।

लोक संबंधी शैली में अत्यंत सुन्दरता के साथ दशावतार का चित्रण हमारे सामने कनकदास ने प्रस्तुत किया है।

कन्नड में -

देवी नम्मद्यावरू बंदरू बन्निरे ॥ प ॥

इस कीर्तन का तेलुगु अनुवाद -

''देवी मनदेवुलु वच्चिरि चूडरंडी ।।प।।
एरूपु कनुल चेपै मन रंगडु
बलियुनि सोमुनि संहरिंचिनाडु संहरिंचि वेदमुल
बंगारपु टोडलिलो नुंचाडु ।।मत्स्य।।
पेद्दमडुवुलोन मन रंगडु
गुट्ट नेत्तुकोनि निल्वुन्नाडु । निल्वोनि, सुरकरूल
पेद्दवारिग चेसाडु ।।कूर्म।।
सुंदर काननमुन वराहमै मन रंगडु
बंगरू कंटि वानिनि संहरिंचाडु, संहरिंचि, भूमिनि
अजसंभवुन किच्चाडु ।।वराह।।
कोपमुन सिंहमै मन रंगडु
पोट्टलोनि प्रेवुल चील्चाडु । चील्चि, हारमुवेसि
बालुनकु वरमिच्चाडु ।।नरसिंहा।।
बालुडिवले मन रंगडु
चतुरूडै अंबरमुनु ताकाडु ताकि बलिनि
पादमुलतो पाताळमुनकु तोक्काडु ।।वामन।।
तल्लि माटविनि सहस्रभुजमुल
आवुल चोरूनि चंपाडु चंपि भूमिलोनि
आ पनि लोनि सुरूल किच्चाडु ।।भार्गव।।
एरूपु कनुल कोतुल जतगूडि
वेगमुन लंककु लंघिंचाडु । लंघिंचि, मन रंगडु
आड चोरूनि चंपाडु ।।रामा।।

नल्लटि नदिलो गोवुल कायुचु
उरगपु मडुवुन दुमिकाडु
पामु पडगपै एगिरेगिरि नर्तिंचाडु
एवरेवरि केमेमो इच्चाडु ।।कृष्ण।।
बंडवाडै पुंडरीकाक्षुडु
एक्कडेक्कडो तिरिगाडु तिरिगि, त्रिपुरूल
भार्यलनेल्ल चेरिचाडु ।।बुद्ध।।
सुंदरसतिनि अश्वमु चेसि
मंचि रौतु ता नय्याडु
डोलु पोट्ट पै तन्नाडु ।।कल्कि।।

उपर्युक्त कीर्तन का सारांश है - ''देवी! हमारे श्रीमहाविष्णु आये हैं आकर देखिये। हमारे भगवान ने लालरंग के आँखों वाली मछली बनकर बलवान सोमकासुर का संहार किया है। सृष्टि के कारक ब्रह्म के हाथों में रहने वाले ये वेद इस प्रकार सोमकासुर नामक राक्षस द्वारा अपहरित होते हुए देखकर भगवान बहुत चिंतित हुए। उस संदर्भ में श्रीमहाविष्णु मत्स्यावतार धारण कर समुंदर में कूदकर सोमकासुर का संहार कर वेदों की रक्षा करते हैं। फिर सुरक्षित रूप से ब्रह्म की गोद में वेद डालते हैं। यह मत्स्यावतार की घटना है।''

दूसरी घटना कूर्मावतार की है। हमारे विष्णु समुद्र में पहाड को उठाकर खडे हुए। एक समय स्वर्गलोक में संपूर्ण संपत्ति लक्ष्मी देवी के संग, दुर्वास मुनि के शाप से समुद्र में समा गयी थी। उन्हें बाहर निकालने के लिए समुद्र को मथना पडा। उस संदर्भ में देवगण और राक्षस गण

इस कीर्तन का तेलुगु अनुवाद -

''देवी मनदेवुलु वच्चिरि चूडरंडी ।।प।।
एरूपु कनुल चेपै मन रंगडु
बलियुनि सोमुनि संहरिंचिनाडु संहरिंचि वेदमुल
बंगारपु टोडलिलो नुंचाडु ।।मत्स्य।।
पेद्दमडुवुलोन मन रंगडु
गुट्ट नेत्तुकोनि निल्वुन्नाडु । निल्वोनि, सुरकरूल
पेद्दवारिग चेसाडु ।।कूर्म।।
सुंदर काननमुन वराहमै मन रंगडु
बंगरू कंटि वानिनि संहरिंचाडु, संहरिंचि, भूमिनि
अजसंभवुन किच्चाडु ।।वराह।।
कोपमुन सिंहमै मन रंगडु
पोट्टलोनि प्रेवुल चील्चाडु । चील्चि, हारमुवेसि
बालुनकु वरमिच्चाडु ।।नरसिंहा।।
बालुडिवले मन रंगडु
चतुरूडै अंबरमुनु ताकाडु ताकि बलिनि
पादमुलतो पाताळमुनकु तोक्काडु ।।वामन।।
तल्लि माटविनि सहस्रभुजमुल
आवुल चोरूनि चंपाडु चंपि भूमिलोनि
आ पनि लोनि सुरूल किच्चाडु ।।भार्गव।।
एरूपु कनुल कोतुल जतगूडि
वेगमुन लंककु लंघिंचाडु । लंघिंचि, मन रंगडु
आड चोरूनि चंपाडु ।।रामा।।

नल्लटि नदिलो गोवुल कायुचु
उरगपु मडुवुन दुमिकाडु
पामु पडगपै एगिरेगिरि नर्तिंचाडु
एवरेवरि केमेमो इच्चाडु ।।कृष्ण।।
बंडवाडै पुंडरीकाक्षुडु
एक्कडेक्कडो तिरिगाडु तिरिगि, त्रिपुरूल
भार्यलनेल्ल चेरिचाडु ।।बुद्ध।।
सुंदरसतिनि अश्वमु चेसि
मंचि रौतु ता नय्याडु
डोलु पोट्ट पै तन्नाडु ।।कल्कि।।

उपर्युक्त कीर्तन का सारांश है - ''देवी! हमारे श्रीमहाविष्णु आये हैं आकर देखिये। हमारे भगवान ने लालरंग के आँखों वाली मछली बनकर बलवान सोमकासुर का संहार किया है। सृष्टि के कारक ब्रह्म के हाथों में रहने वाले ये वेद इस प्रकार सोमकासुर नामक राक्षस द्वारा अपहरित होते हुए देखकर भगवान बहुत चिंतित हुए। उस संदर्भ में श्रीमहाविष्णु मत्स्यावतार धारण कर समुंदर में कूदकर सोमकासुर का संहार कर वेदों की रक्षा करते हैं। फिर सुरक्षित रूप से ब्रह्म की गोद में वेद डालते हैं। यह मत्स्यावतार की घटना है।''

दूसरी घटना कूर्मावतार की है। हमारे विष्णु समुद्र में पहाड को उठाकर खडे हुए। एक समय स्वर्गलोक में संपूर्ण संपत्ति लक्ष्मी देवी के संग, दुर्वास मुनि के शाप से समुद्र में समा गयी थी। उन्हें बाहर निकालने के लिए समुद्र को मथना पडा। उस संदर्भ में देवगण और राक्षस गण

मिलकर मंदर पर्वत को मथनी के रूप में, वासुकी नामक नागराज को रस्सी के रूप में लेकर समुद्र मंथन का कार्य प्रारंभ करते हैं। उस मंथन की तेज रफ़्तार के कारण वह मंदर पर्वत भारी हो गया। वह समुद्र में डूबने लगा। जब इसे देखकर देवता लोग घबराने लगे तब भगवान ने अपने हाथ को पर्वत के नीचे रखकर उसे उठाया। इस प्रकार उठाते समय भगवान कूर्मावतार का रूप धारण कर समुद्र के निचले भाग तक जाकर अपने हाथ से उस पर्वत को उठाते हुए अपने पीठ पर रखा। इसके पश्चात् क्षीर सागर मंथन का कार्य संपन्न हुआ। यह कूर्मावतार की विशेषता है।

वराह अवतार में हमारे श्रीविष्णु ने सुन्दर वन में हिरण्याक्ष का संहार किया तथा बाद में धरती को अजसंभव को दे दिया। इस अवतार में हिरण्याक्ष नामक राक्षस ने इस पृथ्वी को चटाई के रूप में बांधकर समुद्र में गिरा दिया। उस समय भगवान विष्णु, भूदेवी को अभयदान देते हुए वराह का अवतार धारण किया। यह वराह अवतार की विशेषता है।

नरसिंह अवतार में हमारे विष्णु प्रह्लाद की रक्षा करने हेतु सिंह का रूप धारण करते हैं। फिर विष्णु अपने नुकीली नाखूनों से असुर हिरण्यकश्यप की आंतडियों को फाडकर उसका संहार कर प्रह्लाद की रक्षा करते हैं। यह नृसिंह अवतार की विशेषता है।

वामनावतार में हमारे विष्णु बालक बनकर चतुरता से आकाश को छूते हैं। उसके बाद राजा बली को अपने पैरों से दबाकर पाताल लोक में भेज देते हैं। यह वामन अवतार की विशेषता है।

परशुराम अवतार में परशुराम माँ की बातों को सुनकर सहस्त्र भुजों वाले गायों के चोर का संहार करते हैं। उसका संहार कर भूमि पर विजय पाते हैं और उसे कश्यप महर्षि को दान के रूप में दे देते हैं। यह भार्गव अवतार है।

रामावतार में दिखाया गया है कि विष्णु लाल आँखों वाले बंदरों के साथ मिलकर अत्यंत तेजी के साथ लंका पर हमला करते हैं। हमला कर हमारे भगवान स्त्री का अपहरण कर्ता दुष्ट रावण का संहार करते हैं। यह रामावतार की विशेषता है।

कृष्णावतार में काली नदी यमुना के पास गायों को चराते हुए कृष्ण एकदम उस नदी में कूदकर कालिंदी सर्प के फणों पर नृत्य करते हैं। वे वहाँ सभी को कुछ न कुछ वर देते हैं। यह कृष्णावतार की कथा है।

बुद्धावतार में भगवान पुंडरीकाक्ष यहाँ - वहाँ घूमते हुए अंत में त्रिपुरासुर के अंतःपुर की स्त्रियों के शील का अपहरण करते हैं। यह बुद्धावतार का प्रसंग है।

कल्कि अवतार में सुन्दर सती को अश्व में बदलकर स्वयं अच्छे घुडसवार बनते हैं। अच्छा घुडसवार बनकर हमारे भगवान घोडे के पेट पर लात? मारते हैं। अर्थात् इस अवतार में भगवान घोडे पर सवार होकर दुष्टों का संहार कर शिष्ट जनों की रक्षा करते हैं। यह कल्कि अवतार का प्रसंग है।

इस कीर्तन को सुनने के बाद ऐसी अनुभूति प्राप्त होती है कि हमारे आँखों के सामने कनकदास इस कीर्तन को गाते हुए, ढोल बजाते हुए और नृत्य करते हुए हमारे सामने प्रत्यक्ष हो रहे हैं। स्वच्छ कन्नड के देशी

मिलकर मंदर पर्वत को मथनी के रूप में, वासुकी नामक नागराज को रस्सी के रूप में लेकर समुद्र मंथन का कार्य प्रारंभ करते हैं। उस मंथन की तेज रफ़तार के कारण वह मंदर पर्वत भारी हो गया। वह समुद्र में डूबने लगा। जब इसे देखकर देवता लोग घबराने लगे तब भगवान ने अपने हाथ को पर्वत के नीचे रखकर उसे उठाया। इस प्रकार उठाते समय भगवान कूर्मावतार का रूप धारण कर समुद्र के निचले भाग तक जाकर अपने हाथ से उस पर्वत को उठाते हुए अपने पीठ पर रखा। इसके पश्चात् क्षीर सागर मंथन का कार्य संपन्न हुआ। यह कूर्मावतार की विशेषता है।

वराह अवतार में हमारे श्रीविष्णु ने सुन्दर वन में हिरण्याक्ष का संहार किया तथा बाद में धरती को अजसंभव को दे दिया। इस अवतार में हिरण्याक्ष नामक राक्षस ने इस पृथ्वी को चटाई के रूप में बांधकर समुद्र में गिरा दिया। उस समय भगवान विष्णु, भूदेवी को अभयदान देते हुए वराह का अवतार धारण किया। यह वराह अवतार की विशेषता है।

नरसिंह अवतार में हमारे विष्णु प्रह्लाद की रक्षा करने हेतु सिंह का रूप धारण करते हैं। फिर विष्णु अपने नुकीली नाखूनों से असुर हिरण्यकश्यप की आंतडियों को फाडकर उसका संहार कर प्रह्लाद की रक्षा करते हैं। यह नृसिंह अवतार की विशेषता है।

वामनावतार में हमारे विष्णु बालक बनकर चतुरता से आकाश को छूते हैं। उसके बाद राजा बली को अपने पैरों से दबाकर पाताल लोक में भेज देते हैं। यह वामन अवतार की विशेषता है।

परशुराम अवतार में परशुराम माँ की बातों को सुनकर सहस्र भुजों वाले गायों के चोर का संहार करते हैं। उसका संहार कर भूमि पर विजय पाते हैं और उसे कश्यप महर्षि को दान के रूप में दे देते हैं। यह भार्गव अवतार है।

रामावतार में दिखाया गया है कि विष्णु लाल आँखों वाले बंदरों के साथ मिलकर अत्यंत तेजी के साथ लंका पर हमला करते हैं। हमला कर हमारे भगवान स्त्री का अपहरण कर्ता दुष्ट रावण का संहार करते हैं। यह रामावतार की विशेषता है।

कृष्णावतार में काली नदी यमुना के पास गायों को चराते हुए कृष्ण एकदम उस नदी में कूदकर कालिंदी सर्प के फणों पर नृत्य करते हैं। वे वहाँ सभी को कुछ न कुछ वर देते हैं। यह कृष्णावतार की कथा है।

बुद्धावतार में भगवान पुंडरीकाक्ष यहाँ - वहाँ घूमते हुए अंत में त्रिपुरासुर के अंतःपुर की स्त्रियों के शील का अपहरण करते हैं। यह बुद्धावतार का प्रसंग है।

कल्कि अवतार में सुन्दर सती को अश्व में बदलकर स्वयं अच्छे घुडसवार बनते हैं। अच्छा घुडसवार बनकर हमारे भगवान घोडे के पेट पर लात? मारते हैं। अर्थात् इस अवतार में भगवान घोडे पर सवार होकर दुष्टों का संहार कर शिष्ट जनों की रक्षा करते हैं। यह कल्कि अवतार का प्रसंग है।

इस कीर्तन को सुनने के बाद ऐसी अनुभूति प्राप्त होती है कि हमारे आँखों के सामने कनकदास इस कीर्तन को गाते हुए, ढोल बजाते हुए और नृत्य करते हुए हमारे सामने प्रत्यक्ष हो रहे हैं। स्वच्छ कन्नड के देशी

पदों का उपयोग कर लोक शैली में सहज रूप से गाने लायक यह कीर्तन कनकदास के वर्णन की निपुणता को व्यक्त करता है। इस प्रकार एक उद्‌बोधन गीत कन्नड में -

''पूशरन जनकने शतकोटि तरणि प्र
काश अगणित कोटि ब्रह्मांड नायकने ।
वासव मराळि परमेष्ठि वंदित वेंक
टेशा ओलिदुप्पवडिसय्य हरिये''   ।। प ।।

तेलुगु अनुवाद -

''पुडमिपति वैकुंठमनेडि शेषाद्रियंदु
सम्भ्रममुन मेच्चि भक्तुलनु पालिंप काविनेलेयादिकेशव
जगदाडय तिरुवेङ्कटेश जगदीश मेलुकोनुमु हरी ।।''

इसका सारांश है - ''इस कीर्तन में कनकदास ने तिरुमल के वेङ्कटेश्वर को सुप्रभात सेवा समर्पित की। इस कीर्तन में भूमि पर वैकुंठ समान शेषाद्रि के प्रति भक्तजनों की भक्ति से प्रसन्न होकर भक्त जनों का पालन करने वाले 'कागिनेले आदिकेशव'। अब तिरुपति के 'वेङ्कटेश्वर'। हे जगदीश! हे हरि जागो।'' यह कीर्तन भूपाल राग में है, झंपे ताल में है।

लोक साहित्य में ''मंगल, जय मंगल, नित्य शुभ मंगल आदि गीत प्रचुरता में पाये जाते हैं। कनकदास ने भी आरती के गीत रचे। प्रस्तुत कीर्तन दशावतार की आरती गीत है।''

''अंबुज लळाक्षुनकु मंगळम् सर्व
जीवरक्षकुलकु मंगळम्''   ।। प ।।

इस कीर्तन में हरि के सभी अवतारों के लिए मंगल गीत गाया गया है। अंत में -

''पुरत्रय वधुवुल गेलिचिन वानिकि मंगळम्
तुरगवाहनुनकु जय मंगळम् ।।
वरकागिनलेयादिकेशवुनकु मंगळम् ।
सिरिहरि किपुडु शुभ मंगळम् ।।''
(श्रीकनकदासर हाडुगळु, पृ. 198)

इस कीर्तन में ''पुरत्रय वधुओं पर जीत पानेवाले का मंगल हो। अश्व वाहनकार का जय मंगल हो, वर प्रदाता कागिनेले आदिकेशव का मंगल हो। संपत्तिवान हरि का शुभ मंगल हो।''

प्रचुरता पाने वाली लोक कथाओं को आधार बनाकर रचने वाले दास श्रेष्ठों में हेलवने कट्टे गिरियम्मा के बाद प्रशंसित व्यक्तियों में कनकदास ही एक मात्र कवि माने जा सकते हैं। कनकदास द्वारा रचित 'नल चरित्र' (राजा नल की जीवनी) तथा 'मोहन तरंगिणी' की कथा वस्तु जहाँ पौराणिक, ऐतिहासिक कथाओं से स्वीकृत किये गये हैं वहाँ 'रामधान्य चरित' (रामधान्य का इतिहास) की कथावस्तु लोक साहित्य से स्वीकृत की गयी है। वहाँ कनकदास ने लोक साहित्य के आशयों को प्रधान रूप से व्यक्त किया है। लोक साहित्य की व्यवस्था में निहित सभी दशा-दिशाओं को अपने इस काव्य में इन्होंने प्रतिबिम्बित किया है।

सूक्तियों में और लोकोक्तियों में अच्छाई और बुराई मार्मिकता से निरूपित होते हैं। लोगों के अनुभवों से व्यक्त अंश ही इनमें जगह पाये हैं। मानव के स्वभाव में व्यक्त कमियों को और दोषों को ये दिखाते हैं।

पदों का उपयोग कर लोक शैली में सहज रूप से गाने लायक यह कीर्तन कनकदास के वर्णन की निपुणता को व्यक्त करता है। इस प्रकार एक उद्‌बोधन गीत कन्नड में -

''पूशरन जनकने शतकोटि तरणि प्र
काश अगणित कोटि ब्रह्मांड नायकने ।
वासव मराळि परमेष्ठि वंदित वेंक
टेशा ओलिदुप्पवडिसय्य हरिये'' ।। प ।।

तेलुगु अनुवाद -

''पुडमिपति वैकुंठमनेडि शेषाद्रियंदु
सम्भ्रममुन मेच्चि भक्तुलनु पालिंप काविनेलेयादिकेशव
जगदाडय तिरुवेङ्कटेश जगदीश मेलुकोनुमु हरी ।।''

इसका सारांश है - ''इस कीर्तन में कनकदास ने तिरुमल के वेङ्कटेश्वर को सुप्रभात सेवा समर्पित की। इस कीर्तन में भूमि पर वैकुंठ समान शेषाद्रि के प्रति भक्तजनों की भक्ति से प्रसन्न होकर भक्त जनों का पालन करने वाले 'कागिनेले आदिकेशव'। अब तिरुपति के 'वेङ्कटेश्वर'। हे जगदीश! हे हरि जागो।'' यह कीर्तन भूपाल राग में है, झंपे ताल में है।

लोक साहित्य में ''मंगल, जय मंगल, नित्य शुभ मंगल आदि गीत प्रचुरता में पाये जाते हैं। कनकदास ने भी आरती के गीत रचे। प्रस्तुत कीर्तन दशावतार की आरती गीत है।''

''अंबुज लळाक्षुनकु मंगळम् सर्व
जीवरक्षकुलकु मंगळम्'' ।। प ।।

इस कीर्तन में हरि के सभी अवतारों के लिए मंगल गीत गाया गया है। अंत में -

''पुरत्रय वधुवुल गेलिचिन वानिकि मंगळम्
तुरगवाहनुनकु जय मंगळम् ।।
वरकागिनलेयादिकेशवुनकु मंगळम् ।
सिरिहरि किपुडु शुभ मंगळम् ।।''
(श्रीकनकदासर हाडुगळु, पृ. 198)

इस कीर्तन में ''पुरत्रय वधुओं पर जीत पानेवाले का मंगल हो। अश्व वाहनकार का जय मंगल हो, वर प्रदाता कागिनेले आदिकेशव का मंगल हो। संपत्तिवान हरि का शुभ मंगल हो।''

प्रचुरता पाने वाली लोक कथाओं को आधार बनाकर रचने वाले दास श्रेष्ठों में हेलवने कट्टे गिरियम्मा के बाद प्रशंसित व्यक्तियों में कनकदास ही एक मात्र कवि माने जा सकते हैं। कनकदास द्वारा रचित 'नल चरित्र' (राजा नल की जीवनी) तथा 'मोहन तरंगिणी' की कथा वस्तु जहाँ पौराणिक, ऐतिहासिक कथाओं से स्वीकृत किये गये हैं वहाँ 'रामधान्य चरित' (रामधान्य का इतिहास) की कथावस्तु लोक साहित्य से स्वीकृत की गयी है। वहाँ कनकदास ने लोक साहित्य के आशयों को प्रधान रूप से व्यक्त किया है। लोक साहित्य की व्यवस्था में निहित सभी दशा-दिशाओं को अपने इस काव्य में इन्होंने प्रतिबिम्बित किया है।

सूक्तियों में और लोकोक्तियों में अच्छाई और बुराई मार्मिकता से निरूपित होते हैं। लोगों के अनुभवों से व्यक्त अंश ही इनमें जगह पाये हैं। मानव के स्वभाव में व्यक्त कमियों को और दोषों को ये दिखाते हैं।

मानव मूल्य और व्यक्ति की कमजोरियों की अभिव्यक्ति हृदय को छू लेते हैं। उस समय की सामाजिक जीवन की गति विधियाँ और पालन करने की विधायों को व्यक्त करते हैं, संस्कृति को प्रतिबिम्बित करती हैं। लोगों में अंधविश्वासों को दूर करते हैं। अहंकार तथा अज्ञान का निर्मूलन करते हैं।

दास साहित्य का मुख्य केन्द्र हरि है। प्रकृति के सभी वस्तु उनका परिवार है। मानव भी उसमें एक भाग है। मानवता के साथ जीवन यापन करना, भगवान का अनुग्रह पाना-ये सभी मानव की जिन्दगी को सार्थक बनाते हैं। हरिदास साहित्य इसी उद्धेश्य के साथ रचा गया है। भगवान और भक्तों के बीच वैयक्तिक संबंधों को स्थापित करने की भावना दास साहित्यकारों में दिखाई देती है।

मानव जब अपने आपको समझने की क्षमता रखता है तभी संस्कारवान बनता है। इस प्रकार जानने के लिए और संस्कारवान होने के लिए हरिदास के कीर्तन सहायक बनते हैं। इन कीर्तनों में निहित सूक्तियाँ मार्गदर्शक बनते हैं। ग्रामीण लोगों में मुहावरों के रूप में ये सूक्तियाँ पर्याप्त प्रचुरता पा चुकी हैं। गागर में सागर भरना, इन मुहावरों की विशिष्टता है। सभी हरिदास लोगों ने अपने - अपने कीर्तनों में सूक्तियों का प्रयोग किया है। हर एक सूक्ति मानव को अपने आपको बदलने में सहायक बनती है। इस प्रकार की सूक्तियों को कनकदास ने भी अपने कीर्तनों में तथा काव्यों में निक्षिप्त किया है। उनमें से कुछ उदाहरण है।

1. अज्ञानुल तोडि अधिक स्नेहमु कंटे
   सुज्ञानुलतोडि जगडमे मेलु

   (अज्ञानिगळ कूड अधिकस्नेहक्किंत सुज्ञानिगळ कूड जगळवे लेसु)
   ''अज्ञानियों के साथ अधिक स्नेह की बजाय अच्छे लोगों के साथ लड़ाई करने में ही भलाई है।''

2. आयन अनुग्रहिंचिन पिदप एलांटि कुलमय्या
   (आतनोलिदमेले यातर कुलवय्या)
   ''उनका अनुग्रह पाने के पश्चात् अब कुल क्या है?''

3. एवरू श्रेयोभिलाषुलो नम्मवद्दु
   एवरिकेवरूलेरू आपदलु कलिगिनप्पुडु
   (आरू हितवरू येंदु नंबबेड मवे, वासुदेवन भजिसो ओरटुजीवनवे)
   ''कौन हमारे शुभचिंतक होते हैं, इसके लिए चिंता मत करो, किसी पर विश्वास मत करो। जब विपत्तियाँ आती हैं तब कोई किसी का नहीं होता।''

4. ई संपदनु नम्मि पोंगि पोकुमु मनसा
   वासुदेवुनि भजिंपुमो मोरटु जीवनमा
   (ई सिरिय नंबि हिग्गलुबेड मनवे
   वासुदेवनभजिसो ओरटु जीवनवे)
   ''हे मन! इस संपत्ति को देखकर खुशी में न समाओ। हे ढ़ीठ जीव! भगवान वासुदेव का भजन करो।''

5. अंदरू चेसेदि पोट्टकोसम्, जानेडु बट्ट कोसम्
   (येल्लारू माडुवदु होट्टेगागि गेणुबबट्टेगागि)
   ''सब लोग काम करते हैं पेट के लिए और बित्ति भर कपडे के लिए।''

मानव मूल्य और व्यक्ति की कमजोरियों की अभिव्यक्ति हृदय को छू लेते हैं। उस समय की सामाजिक जीवन की गति विधियाँ और पालन करने की विधायों को व्यक्त करते हैं, संस्कृति को प्रतिबिम्बित करती हैं। लोगों में अंधविश्वासों को दूर करते हैं। अहंकार तथा अज्ञान का निर्मूलन करते हैं।

दास साहित्य का मुख्य केन्द्र हरि है। प्रकृति के सभी वस्तु उनका परिवार है। मानव भी उसमें एक भाग है। मानवता के साथ जीवन यापन करना, भगवान का अनुग्रह पाना-ये सभी मानव की जिन्दगी को सार्थक बनाते हैं। हरिदास साहित्य इसी उद्धेश्य के साथ रचा गया है। भगवान और भक्तों के बीच वैयक्तिक संबंधों को स्थापित करने की भावना दास साहित्यकारों में दिखाई देती है।

मानव जब अपने आपको समझने की क्षमता रखता है तभी संस्कारवान बनता है। इस प्रकार जानने के लिए और संस्कारवान होने के लिए हरिदास के कीर्तन सहायक बनते हैं। इन कीर्तनों में निहित सूक्तियाँ मार्गदर्शक बनते हैं। ग्रामीण लोगों में मुहावरों के रूप में ये सूक्तियाँ पर्याप्त प्रचुरता पा चुकी हैं। गागर में सागर भरना, इन मुहावरों की विशिष्टता है। सभी हरिदास लोगों ने अपने - अपने कीर्तनों में सूक्तियों का प्रयोग किया है। हर एक सूक्ति मानव को अपने आपको बदलने में सहायक बनती है। इस प्रकार की सूक्तियों को कनकदास ने भी अपने कीर्तनों में तथा काव्यों में निक्षिप्त किया है। उनमें से कुछ उदाहरण है।

1. अज्ञानुल तोडि अधिक स्नेहमु कंटे
   सुज्ञानुलतोडि जगडमे मेलु

   (अज्ञानिगळ कूड अधिकस्नेहक्किंत सुज्ञानिगळ कूड जगळवे लेसु)
   ''अज्ञानियों के साथ अधिक स्नेह की बजाय अच्छे लोगों के साथ लड़ाई करने में ही भलाई है।''

2. आयन अनुग्रहिंचिन पिदप एलांटि कुलमय्या
   (आतनोलिदमेले यातर कुलवय्या)
   ''उनका अनुग्रह पाने के पश्चात् अब कुल क्या है?''

3. एवरू श्रेयोभिलाषुलो नम्मवद्दु
   एवरिकेवरूलेरू आपदलु कलिगिनप्पुडु
   (आरू हितवरू येंदु नंबबेड मवे, वासुदेवन भजिसो ओरटुजीवनवे)
   ''कौन हमारे शुभचिंतक होते हैं, इसके लिए चिंता मत करो, किसी पर विश्वास मत करो। जब विपत्तियाँ आती हैं तब कोई किसी का नहीं होता।''

4. ई संपदनु नम्मि पोंगि पोकुमु मनसा
   वासुदेवुनि भजिंपुमो मोरटु जीवनमा
   (ई सिरिय नंबि हिग्गलुबेड मनवे
   वासुदेवनभजिसो ओरटु जीवनवे)
   ''हे मन! इस संपत्ति को देखकर खुशी में न समाओ। हे ढ़ीठ जीव! भगवान वासुदेव का भजन करो।''

5. अंदरू चेसेदि पोट्टकोसम्, जानेडु बट्ट कोसम्
   (येल्लारू माडुवदु होट्टेगागि गेणुबबट्टेगागि)
   ''सब लोग काम करते हैं पेट के लिए और बित्ति भर कपडे के लिए।''

6. एचटनुन्नाडो रंगजु अन्न संशयमु वलदु
एचट भक्तुलु पिलुतुरो अचट वच्चि उंटाडु
(एल्लिरूवनो रंग येंब संशयबेड
एल्लि भक्तरू करेये अल्लि बंदोदगुवनु)
''भगवान कहाँ है, इस भ्रम में न पडो, जहाँ भक्त जन बुलाते हैं वहीं पर वे रहते हैं।''

7. एंदरू देवतल बलमुन्न फलमेमि
वासुदेवुनि बलमुलेनि वाडिकि
(येष्टु देवर बलगळिद्दरे फलवेनु, वासुदेवन बलविल्लदवगे)
''चाहे कितनी भी देवताओं का समग्र बल क्यों न हो, क्या फायदा? जब तक भगवान वासुदेव के बल की प्राप्ति नहीं होगी।''

8. कळ्ळे कोरिकलकु कारणम्
(कण्णे कामनबीजे)
''आँखे ही इच्छा के कारक हैं।''

9. कामक्रोधालने चेट्लनु पेरिकि वेयं डय्या
(कामक्रोधताळेंब गिडगळनु तरियिरय्या)
''काम तथा क्रोध नामक वृक्षों को उखाडकर फेंकिये।''

10. चिलुमु पट्टिन पात्रलो आम्लान्नि कलिपि तिनवच्चुगा?
(किलुबिन बट्टलल्लि हुळिकलेसि उणबहुदे)
''जंग भरे बर्तन में तेजाब मिलाकर क्या खा सकते हैं?''

11. चेवियै कर्मकु द्वारम्
(किवियै कर्मक्के द्वार)
''कान ही कर्म के लिए द्वार है।''

12. कुल कुल मनि कोट्टुकोकंडि मी कुलपु मूलमेमैननू तेलुसा?
(कुलकुलवेंदु होडेदाडदिरि निम्म, कुलद नेलेयनेनादरू बल्लिरा)
''कुल के नाम पर झगडा मत करो। आपके कुल का मूल क्या है कुछ जानते भी हो?''

13. गुरू सेवकंटे नधिकमु गलदा?
(गुरू सेवेगिंदधिक सेवेयुंटे)
''गुरू की सेवा से अधिक क्या कुछ और भी है?''

14. चित्तशुद्धि लेनि वानिकि परलोकमु गलदा?
(चित्तशुद्धि यिल्लदवगे परलोकवुंटे)
''जिस मानव में मन की शुद्धि न हो, उस मानव के लिए परलोक प्रवेश की संभावना है क्या?''

15. चलिज्वरमुलकु चंदनलेपमु हितमा?
(छलिज्वरक्के चंदनद लेप हितवे)
''सर्दी युक्त बीमारी में क्या चंदनलेप भलायी कर सकती है?''

16. जन्म सार्थकमु लेनि वारंदरू भागवतुला?
(जन्म सार्थकविल्ल दवरेल्ला भागवतरे)
''जिन लोगों में जन्म को सार्थक बनाने की दृष्टि न हो वे सब भगवान के दास होते हैं क्या?''

17. नीटि बुडगवले स्थिरमु कादी देहमु
(जलदबोब्बुलियंते स्थिरवल्लवीदेह)
''बुद-बुद प्राय है यह देह, स्थिर नहीं है।''

6. एचटनुन्नाडो रंगजु अन्न संशयमु वलदु
एचट भक्तुलु पिलुतुरो अचट वच्चि उंटाडु
(एल्लिरूवनो रंग येंब संशयबेड
एल्लि भक्तरू करेये अल्लि बंदोदगुवनु)
''भगवान कहाँ है, इस भ्रम में न पडो, जहाँ भक्त जन बुलाते हैं वहीं पर वे रहते हैं।''

7. एंदरू देवतल बलमुन्न फलमेमि
वासुदेवुनि बलमुलेनि वाडिकि
(येष्टु देवर बलगळिद्दरे फलवेनु, वासुदेवन बलविल्लदवगे)
''चाहे कितनी भी देवताओं का समग्र बल क्यों न हो, क्या फायदा? जब तक भगवान वासुदेव के बल की प्राप्ति नहीं होगी।''

8. कळ्ळे कोरिकलकु कारणम्
(कण्णे कामनबीजे)
''आँखे ही इच्छा के कारक हैं।''

9. कामक्रोधालने चेट्लनु पेरिकि वेयं डय्या
(कामक्रोधताळेंब गिडगळनु तरियिरय्या)
''काम तथा क्रोध नामक वृक्षों को उखाडकर फेंकिये।''

10. चिलुमु पट्टिन पात्रलो आम्लान्नि कलिपि तिनवच्चुगा?
(किलुबिन बट्टलल्लि हुळिकलेसि उणबहुदे)
''जंग भरे बर्तन में तेजाब मिलाकर क्या खा सकते हैं?''

11. चेवियें कर्मकु द्वारम्
(किवियें कर्मक्के द्वार)
''कान ही कर्म के लिए द्वार है।''

12. कुल कुल मनि कोट्टुकोकंडि मी कुलपु मूलमेमैननू तेलुसा?
(कुलकुलवेंदु होडेदाडदिरि निम्म, कुलद नेलेयनेनादरू बल्लिरा)
''कुल के नाम पर झगडा मत करो। आपके कुल का मूल क्या है कुछ जानते भी हो?''

13. गुरू सेवकंटे नधिकमु गलदा?
(गुरू सेवेगिंदधिक सेवेयुंटे)
''गुरू की सेवा से अधिक क्या कुछ और भी है?''

14. चित्तशुद्धि लेनि वानिकि परलोकमु गलदा?
(चित्तशुद्धि यिल्लदवगे परलोकवुंटे)
''जिस मानव में मन की शुद्धि न हो, उस मानव के लिए परलोक प्रवेश की संभावना है क्या?''

15. चलिज्वरमुलकु चंदनलेपमु हितमा?
(छलिज्वरक्के चंदनद लेप हितवे)
''सर्दी युक्त बीमारी में क्या चंदनलेप भलायी कर सकती है?''

16. जन्म सार्थकमु लेनि वारंदरू भागवतुला?
(जन्म सार्थकविल्ल दवरेल्ला भागवतरे)
''जिन लोगों में जन्म को सार्थक बनाने की दृष्टि न हो वे सब भगवान के दास होते हैं क्या?''

17. नीटि बुडगवले स्थिरमु कादी देहमु
(जलदबोब्बुलियंते स्थिरवल्लवीदेह)
''बुद-बुद प्राय है यह देह, स्थिर नहीं है।''

18. जलमे सकल कुलमुलकु तल्लिकादा?
(जलवे सकल कुलक्के तायल्लवे)
''पानी ही सभी कुलों की माँ नहीं है क्या?''

19. ज्ञानमुलेक नूरूकालमुलु ब्रतुकनेल?
(ज्ञानविल्लदे नूरूकाल बदुकल्यतके)
''ज्ञान के बिना सौ साल की जिन्दगी क्यों?''

20. तानु तिनक परूल किडक धनमुंडि फलमेमि?
(तानु उण्णदे पररगिक्कद धनविद्यतके?)
''धन रहने से क्या फायदा जब खुद भी न खाय और दूसरों को भी न दे?''

21. तल्लि गतिंचिन पिदप पुट्टिनिंटि आशया?
(ताइतीरिदमेले तीरासये?)
''माँ के गुजरने के बाद मायके के प्रति आशा कैसी?''

22. तल्लिदंड्रुल नधिकमुग नोप्पिंचिन वानिकि मुक्ति लभिंचुना?
(तायितंदेगळ बलुनोयिसिद
न्यायिगे मुकुतियु दोरकिते?)
''माँ - बाप को अधिक दुःख पहुँचाने वाले को क्या मुक्ति मिल पायेगी?''

23. तीर्थमुनु बट्टिन वारेल्लरू तिरूनामधारुला?
(तीर्थवनु पिडिदवरेल्ल तिरूनामधारिगळे?)
''तीर्थ (चरणामृत) को स्वीकार करने वाले सभी लोग क्या भगवान के भक्त होते हैं?''

24. देवुडुलेनि गुडि पाडुबड्ड अंगडि
(देवरिल्लद गुडियु हाळु बिद्दंगडियु)
''भगवान रहित मंदिर शिथिल बाजार जैसा होता है।''

25. दानहीनुनिकंटे हीनुडु गलडा?
(दान हीनगिन्नधिक हीननुंटे?)
''दानहीन से बढ़कर और हीन कोई हो सकता है क्या?''
कठपुतलियों का खेल लोक संबंधी प्रदर्शन की एक कला है। कनकदास अपने कीर्तन में कठपुतलियों के खेल के बारे में सूक्ष्म रूप से बता रहे हैं -

कन्नड में -

बोंबेयाटव नाडिसिदे महाभारतव
अंबुज भवादि यादवरू ईक्षिसलु[11]

तेलुगु अनुवाद -

बोम्मलाट नाडिंचितिवि महाभारतमुनु
अंबुजभवादि यादवुलु वीक्षिंप ।। प ।।
कुरूभूमियनेडि परभूमियंदु रंजिंप
मरूगुन माया मयपु तेरनुपट्टि
धरणीशुलन्न नरप्रतिमल नलवडिंचि
नरूनि हयरधपु वागेय सूत्रमुपट्टि ।। 1 ।।

चदिवेडुवाडु नारदुडु वाद्यकारूडु शिवुडु
बादरायणुडे कथाकारूडु
मेदिनि भारमु पोगोट्टु मृत्युहास्यरसमु

---

[11] श्रीकनकदासर कीर्तनेगळु, पृ. 89

18. जलमे सकल कुलमुलकु तल्लिकादा?
(जलवे सकल कुलक्के तायल्लवे)
''पानी ही सभी कुलों की माँ नहीं है क्या?''

19. ज्ञानमुलेक नूरूकालमुलु ब्रतुकनेल?
(ज्ञानविल्लदे नूरूकाल बदुकल्यतके)
''ज्ञान के बिना सौ साल की जिन्दगी क्यों?''

20. तानु तिनक परूल किडक धनमुंडि फलमेमि?
(तानु उण्णदे पररगिक्कद धनविद्यतके?)
''धन रहने से क्या फायदा जब खुद भी न खाय और दूसरों को भी न दे?''

21. तल्लि गतिंचिन पिदप पुट्टिनिंटि आशया?
(ताइतीरिदमेले तीरासये?)
''माँ के गुजरने के बाद मायके के प्रति आशा कैसी?''

22. तल्लिदंड्रुल नधिकमुग नोप्पिंचिन वानिकि मुक्ति लभिंचुना?
(तायितंदेगळ बलुनोयिसिद
न्यायिगे मुकुतियु दोरकिते?)
''माँ - बाप को अधिक दुःख पहुँचाने वाले को क्या मुक्ति मिल पायेगी?''

23. तीर्थमुनु बट्टिन वारेल्लरू तिरूनामधारुला?
(तीर्थवनु पिडिदवरेल्ल तिरूनामधारिगळे?)
''तीर्थ (चरणामृत) को स्वीकार करने वाले सभी लोग क्या भगवान के भक्त होते हैं?''

24. देवुडुलेनि गुडि पाडुबड्ड अंगडि
(देवरिल्लद गुडियु हाळु बिद्दंगडियु)
''भगवान रहित मंदिर शिथिल बाजार जैसा होता है।''

25. दानहीनुनिकंटे हीनुडु गलडा?
(दान हीनगिन्नधिक हीननुंटे?)
''दानहीन से बढ़कर और हीन कोई हो सकता है क्या?''
कठपुतलियों का खेल लोक संबंधी प्रदर्शन की एक कला है। कनकदास अपने कीर्तन में कठपुतलियों के खेल के बारे में सूक्ष्म रूप से बता रहे हैं -

कन्नड में -

बोंबेयाटव नाडिसिदे महाभारतव
अंबुज भवादि यादवरू ईक्षिसलु[11]

तेलुगु अनुवाद -

बोम्मलाट नाडिंचितिवि महाभारतमुनु
अंबुजभवादि यादवुलु वीक्षिंप ।। प ।।
कुरूभूमियनेडि परभूमियंदु रंजिंप
मरूगुन माया मयपु तेरनुपट्टि
धरणीशुलन्न नरप्रतिमल नलवडिंचि
नरूनि हयरधपु वागेय सूत्रमुपट्टि ।। 1 ।।
चदिवेडुवाडु नारदुडु वाद्यकारूडु शिवुडु
बादरायणुडे कथाकारूडु
मेदिनि भारमु पोगोट्टु मृत्युहास्यरसमु

[11]श्रीकनकदासर कीर्तनेगळु, पृ. 89

वेदनिकरमुलु निवाळु लीय
पदुनेनिमिदि क्षोणि मार्बलमु पदुनेनिमिदि दिनमुलु।
कदननाट्य केळिक नाडिंचि ....

इसका सारांश है - ''कनकदास के लिए तो संपूर्ण महाभारत की कथा कठपुतली जैसी दिखाई देती थी। इसके सूत्रधार और कोई नहीं वल्कि स्वयं साक्षात् श्रीहरि ही हैं। दर्शक तो ब्रह्म आदि देवता गण है। इस खेल में उपयोग करने वाले तंत्र को लेकर इस कीर्तन को एक रूपक की तरह गान करना शायद कनकदास ही कर सकते हैं। संगीत, साहित्य और नृत्य का समाहार ही कठपुतली का खेल है। व्यास ही भगवान की कथा को कहने वाले हैं। वाद्यकार शिव हैं। वाद्यों का विवरण न होने पर भी यह जाना जा सकता है कि उस समय वाद्यों का प्रयोग किया जाता था।''

इस कीर्तन में 'केलिका' नामक कला के प्रदर्शन की प्रस्तावना हुई है। यक्षगान की तरह, केलिका भी एक लोक संबंधी कला है। यह पाल्कूरी सोमनाथ द्वारा प्रस्तावित 'केलिका' नामक यक्ष गान प्रदर्शन का कला रूप है। आज भी कर्नाटक में कोलारू जिले में यह सजीव कला के रूप में देखी जा सकती है। यह भी संगीत, साहित्य और नृत्य के साथ जुडी हुई एक समाहार कला है।

कन्नड में -

दासनागो भवपाशनीगो
दासनागो विशेषनागो ।। प ।।[12]

प्रस्तुत कीर्तन में 'जादू' का प्रयोग किया गया है। यह भी एक कला है।

[12]श्रीकनकदासर हाडुगळु, पृ. 23

कन्नड कीर्तन में -

गारूडिय मतबिट्टु नादब्रह्मन पिडिदु
दानधर्मवमाडि सुखियागु मनवे
हीनवृत्तियलि नी केडबेड मनवे ।। प ।।

इस कीर्तन में -

एकनाति एल्लम्ममारि दुर्गि चौडियर ।
अक्करेयिंदलि पूजेमाडलेके
कोंबुहोतु कुरि कोणन बलिगोंब
डोंबेदैवगळनु भजिसिदरू मनवे ।।[13]

प्रस्तुत कीर्तन में प्रस्तावित ''एक्कनाति, येल्लम्मा, मारी, दुर्गी, चौडी आदि सभी ग्राम देवतायें'' हैं। इन्हें क्षुद्र देवता के रूप में भी जाना जाता है। इनकी पूजा करना, इनको भैंस और बकरियों की बलि चढ़ाना, आदि कार्यों का खंडन कनकदास करते हैं। ये देवतायें मनुष्यों से बलि की अपेक्षा रखती हैं। इस कारण उनकी मान्यता है कि सर्वोत्तम हरि की तरह वे शक्तिवान देवता नहीं हैं। कनकदास का कहना है कि इस प्रकार की देवताओं को पूजने वाले व्यक्ति, बलि देने के कारण नरक जायेंगे।

'मोहन तरंगिणी' नामक काव्य में कनकदास ने अपने समकालीन जीवन को प्रतिबिम्बित किया है। वसंतोत्सव करते समय वसंतोत्सव समय की 'रंगीनाटा', विवाह की विधियाँ, खाद्य पदार्थों का विवरण - लोक संबंधी खाद्य पदार्थ 'वडा', 'सुखीनुंडे', 'रोटी', संप्रदाय पद्धतियाँ, खेती - बाडी की पद्धति, शिकार खेलने की रीतियाँ, जुआ खेलने की

[13]श्रीकनकदासर हाडुगळु, पृ. 165-166

वेदनिकरमुलु निवाळु लीय
पदुनेनिमिदि क्षोणि मार्बलमु पदुनेनिमिदि दिनमुलु।
कदननाट्य केळिक नाडिंचि ....

इसका सारांश है - ''कनकदास के लिए तो संपूर्ण महाभारत की कथा कठपुतली जैसी दिखाई देती थी। इसके सूत्रधार और कोई नहीं वल्कि स्वयं साक्षात् श्रीहरि ही हैं। दर्शक तो ब्रह्म आदि देवता गण है। इस खेल में उपयोग करने वाले तंत्र को लेकर इस कीर्तन को एक रूपक की तरह गान करना शायद कनकदास ही कर सकते हैं। संगीत, साहित्य और नृत्य का समाहार ही कठपुतली का खेल है। व्यास ही भगवान की कथा को कहने वाले हैं। वाद्यकार शिव हैं। वाद्यों का विवरण न होने पर भी यह जाना जा सकता है कि उस समय वाद्यों का प्रयोग किया जाता था।''

इस कीर्तन में 'केलिका' नामक कला के प्रदर्शन की प्रस्तावना हुई है। यक्षगान की तरह, केलिका भी एक लोक संबंधी कला है। यह पाल्कूरी सोमनाथ द्वारा प्रस्तावित 'केलिका' नामक यक्ष गान प्रदर्शन का कला रूप है। आज भी कर्नाटक में कोलारू जिले में यह सजीव कला के रूप में देखी जा सकती है। यह भी संगीत, साहित्य और नृत्य के साथ जुडी हुई एक समाहार कला है।

कन्नड में -

दासनागो भवपाशनीगो
दासनागो विशेषनागो ।। प ।।[12]

प्रस्तुत कीर्तन में 'जादू' का प्रयोग किया गया है। यह भी एक कला है।

[12]श्रीकनकदासर हाडुगळु, पृ. 23

कन्नड कीर्तन में -

गारूडिय मतबिट्टु नादब्रह्मन पिडिदु
दानधर्मवमाडि सुखियागु मनवे
हीनवृत्तियलि नी केडबेड मनवे ।। प ।।

इस कीर्तन में -

एकनाति एल्लम्ममारि दुर्गि चौडियर ।
अक्करेयिंदलि पूजेमाडलेके
कोंबुहोतु कुरि कोणन बलिगोंब
डोंबेदैवगळनु भजिसिदरू मनवे ।।[13]

प्रस्तुत कीर्तन में प्रस्तावित ''एक्कनाति, येल्लम्मा, मारी, दुर्गी, चौडी आदि सभी ग्राम देवतायें'' हैं। इन्हें क्षुद्र देवता के रूप में भी जाना जाता है। इनकी पूजा करना, इनको भैंस और बकरियों की बलि चढ़ाना, आदि कार्यों का खंडन कनकदास करते हैं। ये देवतायें मनुष्यों से बलि की अपेक्षा रखती हैं। इस कारण उनकी मान्यता है कि सर्वोत्तम हरि की तरह वे शक्तिवान देवता नहीं हैं। कनकदास का कहना है कि इस प्रकार की देवताओं को पूजने वाले व्यक्ति, बलि देने के कारण नरक जायेंगे।

'मोहन तरंगिणी' नामक काव्य में कनकदास ने अपने समकालीन जीवन को प्रतिबिम्बित किया है। वसंतोत्सव करते समय वसंतोत्सव समय की 'रंगीनाटा', विवाह की विधियाँ, खाद्य पदार्थों का विवरण - लोक संबंधी खाद्य पदार्थ 'वडा', 'सुखीनुंडे', 'रोटी', संप्रदाय पद्धतियाँ, खेती - बाडी की पद्धति, शिकार खेलने की रीतियाँ, जुआ खेलने की

[13]श्रीकनकदासर हाडुगळु, पृ. 165-166

पद्धतियाँ, घर के आँगन में स्थित तुलसी, भजन एवं पूजा आदि कार्यक्रम, नगर की राहों में ढ़ेर डालकर बेची जाने वाली मोतियाँ, रत्न, धान, फल एवं पुष्प आदि सभी इस काव्य में प्रत्यक्ष होते हैं।

कनकदास वैदिक धर्म के नियमों को तथा आचरणों को अपने कीर्तनों द्वारा खंडित करते हुए दिखाई देते हैं। उपवास रखना, तीर्थ यात्रा करना आदि विश्वासों के प्रति वे इस प्रकार प्रश्न करते हैं।

कन्नड में -

नीर मुणुगलु एके नारियनु बिडलेके ।
वारकोंदुपवास विरलेतके ।
नारसिंहनु दिव्यनामवनु नेनेदरे ।
घोरपातकवेल्ल तोलगिपोगुवुदु ।।[14]

इसका भावार्थ है ''पानी में डुबकियाँ लगाना क्यों? स्त्री को छोडना क्यों? हफ्ते में एक बार उपवास रखना क्यों? इसके बदले में भगवान नारसिंह के दिव्य नाम का स्मरण करने से घोर पाप नाश हो जायेंगे न?'' कहकर कनकदास प्रश्न करते हैं।

इसी प्रकार एक और कन्नड कीर्तन में -

मीसलागि मिंदु जप - तप होम - नेमगळ ।
एसुबारि मडिदरू फलवेनो - अदु छलवेनो ।।
वासुदेवनेंब ओळगिद्ध हंसन सेरि ।
लेसनुंडु मोसगोळदे मुक्तनागो - नीशक्तनागो ।।

(श्रीकनकदासर हाडुगळु, पृ.22)

[14] श्रीकनकदासर हाडुगळु, पृ. 19

इसका सारंश है ''पानी में डुबकी लगाकर जप - तप, होम और व्रत चाहे कितनी ही बार करो, फायदा क्या है? वासुदेव भगवान नामक अंदर स्थित हंस को पाओ, तभी धोखा खाये बिना मुक्त हो सकते हो और शक्तिवान भी हो सकते हो।'' अन्य कीर्तन में वे कहते हैं -

कष्टपट्टरू इल्ल कळवळिसिदरिल्ल ।
भ्रष्टमानव हणेयबरेह वल्लदे इल्ल ।।

(श्रीकनकदासर हाडुगळु, पृ.136)

यह भाग्य से संबंधित विश्वास है। सदियों से यह विश्वास लोगों में बसा हुआ है कि भाग्य को कोई टाल नहीं सकता। लोक में प्रचलित इस विश्वास को कनकदास ने अपने कीर्तन में प्रवेश किया है।

इस प्रकार कनकदास ने अपने कीर्तनों में तथा काव्यों में अनगिनत लोक संबंधी अंशों को जोडकर मध्व धर्म के तत्वों के साथ सामाजिक मूल्यों को भी लोगों तक पहुँचाया है।

* * *

पद्धतियाँ, घर के आँगन में स्थित तुलसी, भजन एवं पूजा आदि कार्यक्रम, नगर की राहों में ढ़ेर डालकर बेची जाने वाली मोतियाँ, रत्न, धान, फल एवं पुष्प आदि सभी इस काव्य में प्रत्यक्ष होते हैं।

कनकदास वैदिक धर्म के नियमों को तथा आचरणों को अपने कीर्तनों द्वारा खंडित करते हुए दिखाई देते हैं। उपवास रखना, तीर्थ यात्रा करना आदि विश्वासों के प्रति वे इस प्रकार प्रश्न करते हैं।

कन्नड में -

नीर मुणुगलु एके नारियनु बिडलेके ।
वारकोंदुपवास विरलेतके ।
नारसिंहनु दिव्यनामवनु नेनेदरे ।
घोरपातकवेल्ल तोलगिपोगुवुदु ।।[14]

इसका भावार्थ है ''पानी में डुबकियाँ लगाना क्यों? स्त्री को छोडना क्यों? हफ्ते में एक बार उपवास रखना क्यों? इसके बदले में भगवान नारसिंह के दिव्य नाम का स्मरण करने से घोर पाप नाश हो जायेंगे न?'' कहकर कनकदास प्रश्न करते हैं।

इसी प्रकार एक और कन्नड कीर्तन में -

मीसलागि मिंदु जप - तप होम - नेमगळ ।
एसुबारि मडिदरू फलवेनो - अदु छलवेनो ।।
वासुदेवनेंब ओळगिद्ध हंसन सेरि ।
लेसनुंडु मोसगोळदे मुक्तनागो - नीशक्तनागो ।।

(श्रीकनकदासर हाडुगळु, पृ.22)

[14] श्रीकनकदासर हाडुगळु, पृ. 19

इसका सारंश है ''पानी में डुबकी लगाकर जप - तप, होम और व्रत चाहे कितनी ही बार करो, फायदा क्या है? वासुदेव भगवान नामक अंदर स्थित हंस को पाओ, तभी धोखा खाये बिना मुक्त हो सकते हो और शक्तिवान भी हो सकते हो।'' अन्य कीर्तन में वे कहते हैं -

कष्टपट्टरू इल्ल कळवळिसिदरिल्ल ।
भ्रष्टमानव हणेयबरेह वल्लदे इल्ल ।।

(श्रीकनकदासर हाडुगळु, पृ.136)

यह भाग्य से संबंधित विश्वास है। सदियों से यह विश्वास लोगों में बसा हुआ है कि भाग्य को कोई टाल नहीं सकता। लोक में प्रचलित इस विश्वास को कनकदास ने अपने कीर्तन में प्रवेश किया है।

इस प्रकार कनकदास ने अपने कीर्तनों में तथा काव्यों में अनगिनत लोक संबंधी अंशों को जोडकर मध्व धर्म के तत्वों के साथ सामाजिक मूल्यों को भी लोगों तक पहुँचाया है।

* * *

भक्त कनकदास के काव्य

कनकदास अनेक कीर्तनों को रचने के साथ - साथ 'मोहनतरंगिणी', 'नलचरित्र', 'हरिभक्तिसार', 'रामधन्य चरित्रा', 'नृसिंह स्तवम्' नामक अनेक काव्यों की रचना भी की। नृसिंह स्तवन नामक काव्य अलभ्य है। कन्नड साहित्य के इतिहासकार 'र. नरसिंहाचार्युलु' द्वारा विदित होता है कि इस काव्य में 97 सांगत्य है। 'मोहन तरंगिणी' सांगत्य काव्य है। इसमें 42 संधियाँ और तकरीबन 2800 सांगत्य है। इस काव्य के लिए दूसरा नाम है 'कृष्णचरित्र'। 'स्कांदपुराण', 'विष्णुपुराण', 'महाभारत', 'भागवत', 'हरिवंश की कथाएँ' इस ग्रंथ के लिए आधार बने हैं। इस काव्य में कामदेव का दहन, कामोत्पत्ति, संबरासुर - बाणासुर नामक राक्षसों का वध, अनिरूद्ध की लीलाएँ आदि अंश हैं। पंडितों का मत है कि यह काव्य कनकदास की पहली रचना है।

इस काव्य में संप्रदायबद्ध अष्टादश वर्णनों को रखने का प्रयास किया गया है। वर्णनों में यत्र - तत्र सहज एवं सुन्दर कल्पनाएँ प्रस्तुत हैं। इन वर्णनों में अधिकांशतः समकालीन जीवन का प्रतिबिम्ब दिखाई देता है। यह काव्य महाकाव्य के लक्षणों को अपनाने वाली रचना के रूप में प्रसिद्धि पाई है। स्कंदपुराण की कौमरिका, केदार खंडों में कामदहन के इतिवृत्त को, भागवत के उषा - अनिरूद्ध के प्रणय इतिवृत्त को, विष्णु पुराण के रति - प्रद्युम्न की कथा को लेकर रसमय घटनाओं के वर्णनों के साथ कनकदास ने इस काव्य को रचा है। इन सभी पुराणों के इतिवृत्तों को स्वीकार कर, इसे एक रस भरित श्रृंगार काव्य की तरह रचा है। इसमें निहित काव्य वस्तु सम्मोहन श्रृंगार है। इसे कहने वाली उनकी ही पत्नी जो ज्ञानी वधु होने के कारण कवि के लिए किसी भी प्रकार की अडचनें पैदा नहीं हुईं।

काव्य की कथावस्तु 1. रुक्मिणी - कृष्ण का वृत्तांत, कामदहन की कथा, 2. रति - प्रद्युम्न का वृत्तांत, संबरासुर का वध 3. उषा - अनिरूद्ध का वृत्तांत, बाणासुर का वध, इस प्रकार तीन भागों में इस काव्य वस्तु का विभाजन किया जा सकता है।[15] संपूर्ण काव्य इन तीनों जोडियों की प्रणय गथा है। इसके साथ तीन वधों से संबंधित इतिवृत्तों से जुडी हुई यह कथा तीन पीढ़ियों की कथा है। इस काव्य के प्रमुख पात्र हैं - रुक्मिणी - कृष्ण, रति - प्रद्युम्न, उषा - अनिरुद्ध, संबरासुर और बाणासुर। काव्य के नायक श्रीकृष्ण हैं। संपूर्ण काव्य में श्रीकृष्ण का ही पूरा अधिकार है। सब कुछ उनकी लीलाएँ हैं। बाकी पात्र तो उन्होंने जिस तरह नचाया, उसी तरह नाचनेवाली कठपुतलियाँ हैं। इसी भाव को कनकदास ने इस कथा में प्रस्तुत कर आगे बढ़ाया है। बापासुर खलनायक है। वे भी अप्रतिम साहस वीर है, शूर है, अनन्य शिवभक्त हैं। इसी कारण श्रीकृष्ण द्वारा 998 भुजाओं का खंडन वाले बाणासुर को शिव सीधा कौलाश ले जाते हैं। इस घटना के कारण काव्य में शुभप्रद मोड आया है। यह काव्य उषा - अनिरुद्ध के विवाह से समाप्त होता है।[16]

बाणासुर द्वारा संपन्न शिव पूजा के समय शिव भक्ति दिखायी देती है। कनकदास की दृष्टि में हरि और हर, दोनों में अंतर नहीं है। दोनों समान हैं। हरि और हर के प्रतिनिधि के रूप में दिखने वाले उषा - अनिरुद्ध के विवाह तक, कनकदास का भागवत मन दिखाई देता है। इसके अलावा इससे यह भी स्पष्ट होता है जब ये दोनों एक ही आसन पर बैठकर फालाक्ष पुंडरीकाक्ष की, बेल पत्र और तुलसी पत्र के साथ पूजा करते हैं।

---

[15]कनकदासु, पृ. टी. एस. नागरत्न

[16]कनकदासु, पृ. टी. एस. नागरत्न

भक्त कनकदास के काव्य

कनकदास अनेक कीर्तनों को रचने के साथ - साथ 'मोहनतरंगिणी', 'नलचरित्र', 'हरिभक्तिसार', 'रामधन्य चरित्रा', 'नृसिंह स्तवम्' नामक अनेक काव्यों की रचना भी की। नृसिंह स्तवन नामक काव्य अलभ्य है। कन्नड साहित्य के इतिहासकार 'र. नरसिंहाचार्युलु' द्वारा विदित होता है कि इस काव्य में 97 सांगत्य है। 'मोहन तरंगिणी' सांगत्य काव्य है। इसमें 42 संधियाँ और तकरीबन 2800 सांगत्य है। इस काव्य के लिए दूसरा नाम है 'कृष्णचरित्र'। 'स्कांदपुराण', 'विष्णुपुराण', 'महाभारत', 'भागवत', 'हरिवंश की कथाएँ' इस ग्रंथ के लिए आधार बने हैं। इस काव्य में कामदेव का दहन, कामोत्पत्ति, संबरासुर - बाणासुर नामक राक्षसों का वध, अनिरूद्ध की लीलाएँ आदि अंश हैं। पंडितों का मत है कि यह काव्य कनकदास की पहली रचना है।

इस काव्य में संप्रदायबद्ध अष्टादश वर्णनों को रखने का प्रयास किया गया है। वर्णनों में यत्र - तत्र सहज एवं सुन्दर कल्पनाएँ प्रस्तुत हैं। इन वर्णनों में अधिकांशतः समकालीन जीवन का प्रतिबिम्ब दिखाई देता है। यह काव्य महाकाव्य के लक्षणों को अपनाने वाली रचना के रूप में प्रसिद्धि पाई है। स्कंदपुराण की कौमरिका, केदार खंडों में कामदहन के इतिवृत्त को, भागवत के उषा - अनिरूद्ध के प्रणय इतिवृत्त को, विष्णु पुराण के रति - प्रद्युम्न की कथा को लेकर रसमय घटनाओं के वर्णनों के साथ कनकदास ने इस काव्य को रचा है। इन सभी पुराणों के इतिवृत्तों को स्वीकार कर, इसे एक रस भरित श्रृंगार काव्य की तरह रचा है। इसमें निहित काव्य वस्तु सम्मोहन श्रृंगार है। इसे कहने वाली उनकी ही पत्नी जो ज्ञानी वधु होने के कारण कवि के लिए किसी भी प्रकार की अडचनें पैदा नहीं हुईं।

काव्य की कथावस्तु 1. रुक्मिणी - कृष्ण का वृत्तांत, कामदहन की कथा, 2. रति - प्रद्युम्न का वृत्तांत, संबरासुर का वध 3. उषा - अनिरूद्ध का वृत्तांत, बाणासुर का वध, इस प्रकार तीन भागों में इस काव्य वस्तु का विभाजन किया जा सकता है।[15] संपूर्ण काव्य इन तीनों जोडियों की प्रणय गथा है। इसके साथ तीन वधों से संबंधित इतिवृत्तों से जुडी हुई यह कथा तीन पीढ़ियों की कथा है। इस काव्य के प्रमुख पात्र हैं - रुक्मिणी - कृष्ण, रति - प्रद्युम्न, उषा - अनिरुद्ध, संबरासुर और बाणासुर। काव्य के नायक श्रीकृष्ण हैं। संपूर्ण काव्य में श्रीकृष्ण का ही पूरा अधिकार है। सब कुछ उनकी लीलाएँ हैं। बाकी पात्र तो उन्होंने जिस तरह नचाया, उसी तरह नाचनेवाली कठपुतलियाँ हैं। इसी भाव को कनकदास ने इस कथा में प्रस्तुत कर आगे बढ़ाया है। बापासुर खलनायक है। वे भी अप्रतिम साहस वीर है, शूर है, अनन्य शिवभक्त हैं। इसी कारण श्रीकृष्ण द्वारा 998 भुजाओं का खंडन वाले बाणासुर को शिव सीधा कौलाश ले जाते हैं। इस घटना के कारण काव्य में शुभप्रद मोड आया है। यह काव्य उषा - अनिरुद्ध के विवाह से समाप्त होता है।[16]

बाणासुर द्वारा संपन्न शिव पूजा के समय शिव भक्ति दिखायी देती है। कनकदास की दृष्टि में हरि और हर, दोनों में अंतर नहीं है। दोनों समान हैं। हरि और हर के प्रतिनिधि के रूप में दिखने वाले उषा - अनिरुद्ध के विवाह तक, कनकदास का भागवत मन दिखाई देता है। इसके अलावा इससे यह भी स्पष्ट होता है जब ये दोनों एक ही आसन पर बैठकर फालाक्ष पुंडरीकाक्ष की, बेल पत्र और तुलसी पत्र के साथ पूजा करते हैं।

[15]कनकदासु, पृ. टी. एस. नागरत्न

[16]कनकदासु, पृ. टी. एस. नागरत्न

''मोहन तरंगिणी'' में कनकदास श्रृंगार वर्णनों को ही प्रधानता देते हैं। श्रृंगार रस के निर्वहण में रति - शस्त्र को आधार रूप में लिया है। कंदर्प जन्म, मार जन्म, जल क्रीडायें, रति, गर्भादान, अनिरुद्ध का जन्म, उषादेवी का श्रृंगार, उषा स्वप्न, उषा - अनिरुद्ध के एकांत की सुखपूर्ण घडियाँ आदि इतिवृत्तों में संभोग श्रृंगार, उषा के विरह में विप्रलंभ श्रृंगार दृष्टिगोचर होते हैं।

इस काव्य का श्रृंगार, इहलोक का श्रृंगार नहीं है। यह कृष्णार्पित है, भगवान को समर्पित किया गया है। यहाँ शील - अश्लील के प्रश्न उदित नहीं होते हैं।[17] जल क्रीडा के संदर्भ में हास्य, और कंदर्प जन्म के वृत्तांत में संबरासुर द्वारा दस दिन के शिशु के अपहरण का संदर्भ, शिशु को न पाकर रुक्मिणी का शोक मग्न होना, कामदेव के दहन के अनंतर रति का आक्रोश आदि संदर्भों में करूण रस के चित्र अंकित हैं। इसी प्रकार संदर्भानुसार रौद्र, वीर, भयानक रसों का भी निर्वहण हुआ है। श्रृंगार आदि आठ रसों के साथ शांत रस को उसके लक्ष्य स्थान में प्रवेशित किया गया है। यहाँ सभी विषय शुभ के साथ समाप्त होते हैं। इस काव्य का लक्ष्य भगवत साक्षात्कार है। कृष्ण की स्तुति, कृष्ण की जीवनी का भी संदर्भानुसार वर्णन हुआ है। भागवात की कथाओं को समग्र रूप से कनकदास ने इस काव्य में 42 संधियों में व्यक्त किया है।''[18]

इसमें कनकदास जी का भागवत की मानसिकता स्पष्ट होता है। ''केशव के प्रति, मेरे प्रति अगर द्वेष बुद्धि को दिखायेंगे तो दोष लगेगा''

---

[17] मोहनतरंगिणी, पृ. 76, सं. जि. जि. मंजुनाथन

[18] मोहनतरंगिणी, पृ. 82, सं. जि. जि. मंजुनाथन

इस प्रकार कहने के पीछे कनकदास में निहित समरसता दृष्टि के साथ - साथ क्रांति कवि का भी दर्शन होता है।

कनकदास ने 'मोहन तरंगिणी' काव्य में अत्यंत रमणीयता के साथ वर्णन किया है। सूर्योदय, सूर्यास्त, नदी, समुद्र, शिकार का विनोद आदि अष्टादश वर्णनों के साथ श्रीकृष्ण की राजधानी द्वारका नगर का वर्णन, बाणासुर का शोणितपुर वर्णन, रति - प्रद्युम्न तथा उषा - अनिरुद्ध के श्रृंगार पूर्ण वर्णन, देश की समृद्ध संपत्ति का वर्णन, खाद्य पदार्थों का वर्णन, युद्ध भूमि तथा युद्ध वीरों का वर्णन, वसंतोत्सव के समय की 'रंगीनाटा' (जनपद का एक कलारूप) का वर्णन आदि अत्यंत सुंदर वर्णन चित्रात्मक रूप से भासित हुए हैं।

''कंज बांधवुडस्तमिंप पडमटि पडुचु
चैतन्यमुडिगि तन
मंजुलपुनोट तांबूल मुमुसिनदुल
संजकेंजयलो तोचे ।''

सूर्यास्त समय का यह वर्णन अत्यंत अद्भुत स्वाभाविक बन पडी है। यहाँ भी कवि ने श्रृंगार के नेपथ्य को ही ग्रहण किया है। श्रीकृष्ण के द्वारका नगर की सामान्य जनों की रसिकता का वर्णन इस प्रकार किया गया है।

''सुंदर वारकांतल, कन्नियल
चिवुरू पालिंड्लगांचि नव्वुचु
लेत व्रेळ्ळ मेट्टिकलु तीयुचु चेतिकि गाजुल
तोडिगिंचु गाजुलवारि पगिदि''

''मोहन तरंगिणी'' में कनकदास श्रृंगार वर्णनों को ही प्रधानता देते हैं। श्रृंगार रस के निर्वहण में रति - शस्त्र को आधार रूप में लिया है। कंदर्प जन्म, मार जन्म, जल क्रीडायें, रति, गर्भादान, अनिरुद्ध का जन्म, उषादेवी का श्रृंगार, उषा स्वप्न, उषा - अनिरुद्ध के एकांत की सुखपूर्ण घडियाँ आदि इतिवृत्तों में संभोग श्रृंगार, उषा के विरह में विप्रलंभ श्रृंगार दृष्टिगोचर होते हैं।

इस काव्य का श्रृंगार, इहलोक का श्रृंगार नहीं है। यह कृष्णार्पित है, भगवान को समर्पित किया गया है। यहाँ शील - अश्लील के प्रश्न उदित नहीं होते हैं।[17] जल क्रीडा के संदर्भ में हास्य, और कंदर्प जन्म के वृत्तांत में संबरासुर द्वारा दस दिन के शिशु के अपहरण का संदर्भ, शिशु को न पाकर रुक्मिणी का शोक मग्न होना, कामदेव के दहन के अनंतर रति का आक्रोश आदि संदर्भों में करूण रस के चित्र अंकित हैं। इसी प्रकार संदर्भानुसार रौद्र, वीर, भयानक रसों का भी निर्वहण हुआ है। श्रृंगार आदि आठ रसों के साथ शांत रस को उसके लक्ष्य स्थान में प्रवेशित किया गया है। यहाँ सभी विषय शुभ के साथ समाप्त होते हैं। इस काव्य का लक्ष्य भगवत साक्षात्कार है। कृष्ण की स्तुति, कृष्ण की जीवनी का भी संदर्भानुसार वर्णन हुआ है। भागवात की कथाओं को समग्र रूप से कनकदास ने इस काव्य में 42 संधियों में व्यक्त किया है।''[18]

इसमें कनकदास जी का भागवत की मानसिकता स्पष्ट होता है। ''केशव के प्रति, मेरे प्रति अगर द्वेष बुद्धि को दिखायेंगे तो दोष लगेगा''

[17] मोहनतरंगिणी, पृ. 76, सं. जि. जि. मंजुनाथन

[18] मोहनतरंगिणी, पृ. 82, सं. जि. जि. मंजुनाथन

इस प्रकार कहने के पीछे कनकदास में निहित समरसता दृष्टि के साथ - साथ क्रांति कवि का भी दर्शन होता है।

कनकदास ने 'मोहन तरंगिणी' काव्य में अत्यंत रमणीयता के साथ वर्णन किया है। सूर्योदय, सूर्यास्त, नदी, समुद्र, शिकार का विनोद आदि अष्टादश वर्णनों के साथ श्रीकृष्ण की राजधानी द्वारका नगर का वर्णन, बाणासुर का शोणितपुर वर्णन, रति - प्रद्युम्न तथा उषा - अनिरुद्ध के श्रृंगार पूर्ण वर्णन, देश की समृद्ध संपत्ति का वर्णन, खाद्य पदार्थों का वर्णन, युद्ध भूमि तथा युद्ध वीरों का वर्णन, वसंतोत्सव के समय की 'रंगीनाटा' (जनपद का एक कलारूप) का वर्णन आदि अत्यंत सुंदर वर्णन चित्रात्मक रूप से भासित हुए हैं।

''कंज बांधवुडस्तमिंप पडमटि पडुचु
चैतन्यमुडिगि तन
मंजुलपुनोट तांबूल मुमुसिनटुल
संजकेंजयलो तोचे ।''

सूर्यास्त समय का यह वर्णन अत्यंत अद्भुत स्वाभाविक बन पडी है। यहाँ भी कवि ने श्रृंगार के नेपथ्य को ही ग्रहण किया है। श्रीकृष्ण के द्वारका नगर की सामान्य जनों की रसिकता का वर्णन इस प्रकार किया गया है।

''सुंदर वारकांतल, कन्नियल
चिवुरू पालिंडूलगांचि नव्वुचु
लेत व्रेळूळ मेट्टिकलु तीयुचु चेतिकि गाजुल
तोडिगिंचु गाजुलवारि पगिदि''

सुन्दर नारियों के स्तनों को देखकर हँसते हुए उनके कोमल हथेलियों की उँगलियों को चटकाते हुए उनके हाथों में चूडियाँ पहनाने वाले चुडीहारे, सडक के इर्द - गिर्द खडे हुए हैं।

कन्नड कीर्तन में :

''तुरुगिद कायिपण्णळ सालवृक्षव
मुरिदु दूळि चेल्लि कोळुता
सुरिव सोंडिल निग्रियुत बंदुदु
बिरुगाळि मदगजदंते''

इन चरणों में बारिश और तेज हवा ऐसे शोर मचा रहे हैं जैसे वे फलों सहित वृक्षों के कतार को नाश करने वाले मदगज हों। उस तेज हवा के कारण ऊपर उठनेवाला धूल ऐसा दिखाई दे रहा है जैसे मदगज स्वयं अपने ऊपर धूल डाल रहा हों। वर्षा के कारण आई तूफानी हवा का वर्णन कनकदास ने अत्यंत रमणीयता के साथ किया है।

उषा - अनिरुद्ध के बीच चित्रलेखा द्वारा आयोजित दूतकार्य, कामदेव - कृष्ण का हमला, अनिरुद्ध - बाणासुर का युद्ध, रति का विरह, उषा देवी का विरह, रति - प्रद्युम्न तथा उषा - अनिरुद्ध के विवाह आदि स्थानों पर चित्रित वर्णन अत्यंत सुंदर बन पडे हैं। इनमें वर्णित वस्तु केवल वर्णन के लिए ही रचे नहीं गये, बल्कि कनकदास द्वारा लोक को परखने की शक्ति इसमें स्पष्ट दिखाई देती है। समकालीन परिस्थितियों का चित्रण भी वे हमारे सामने लाकर खडा करते हैं।

'नल चरित्र' (नल की जीवनी) ''भामिनी शठपदी'' में रचित है। इसमें 9 संधियाँ, 480 पद हैं। महाभारत में वर्णित नलोपाख्यान ही इस

काव्य के लिए आधार है। यह काव्य छोटा होने पर भी सुन्दर है। चाहे राजा ही क्यों न हो, भाग्य के सामने झुककर अनेक कष्टों का सामना कर, अंत में शुभ परिणाम लाने वाली नल की कहानी कनकदास के हाथों अत्यंत रमणीयता के साथ चित्रित है। इतिवृत्त की अभिव्यक्ति पक्ष का कला कौशल इस काव्य के माधुर्य को दोगुना कर देता है।

'नल चरित्र' काव्य, वरपुर चेन्निग राज को अंकित किया गया है। नल और दमयंती की प्रेम कहानी पवित्र है। यह कहानी हंस के दूत कार्य से प्रारंभ होकर, नल दमयंती के पवित्र प्रेम परिणय के साथ समाप्त होता है। बीच में घटित विरह ताप की वेदना उनके पुनर्मिलन से समाप्त होता है। स्त्री - परुषों के आदर्श जीवन का चित्रण इसमें निहित है। इसके द्वारा दूत कर्म निभाने के कारण नल - दमयंती विवाह के बंधन में बंध गये हैं। देवता गण दमयंती को चाहते हैं, लेकिन दमयंती उन्हें नकार कर अपने को प्रेम करने वाले से विवाह करती है। इस प्रकार दमयंती धैर्यशाली नारी के रूप में प्रस्तुत होती है। इसी प्राकर 'हरिश्चंद्र' काव्य में जिस प्रकार हरिश्चन्द्र सत्य का प्रतीक बनता है, वैसे ही नल भी प्रेम का प्रतीक बनता है। हंस द्वारा दूत कर्म निभाने के कारण प्रेम विवाह करनेवाले दंपत्ति हैं नल - दमयंती।

नल को जुआ के प्रति अत्यधिक रुचि है यह एक प्रकार की बुरी आदत है। यह उसकी कमजोरी है। इन्द्र जैसे देवता को नकारकर नल से विवाह का समाचार पाकर, कलि पुरुष ने नल के इस कमजोरी का फायदा उठाकर नल के छोटे भाई पुष्कर से मिलकर, दोनों भाईयों के साथ जुआ खेला, नल को हराया और उसे जंगल भेज दिया। तब दमयंती अपने दोनों बच्चों को पिता के घर भेजकर स्वयं पति के साथ

सुन्दर नारियों के स्तनों को देखकर हँसते हुए उनके कोमल हथेलियों की उँगलियों को चटकाते हुए उनके हाथों में चूडियाँ पहनाने वाले चुडीहारे, सडक के इर्द - गिर्द खडे हुए हैं।

कन्नड कीर्तन में :

''तुरुगिद कायिपण्णळ सालवृक्षव
मुरिदु दूळि चेल्लि कोळुता
सुरिव सोंडिल निग्रियुत बंदुदु
बिरुगाळि मदगजदंते''

इन चरणों में बारिश और तेज हवा ऐसे शोर मचा रहे हैं जैसे वे फलों सहित वृक्षों के कतार को नाश करने वाले मदगज हों। उस तेज हवा के कारण ऊपर उठनेवाला धूल ऐसा दिखाई दे रहा है जैसे मदगज स्वयं अपने ऊपर धूल डाल रहा हों। वर्षा के कारण आई तूफानी हवा का वर्णन कनकदास ने अत्यंत रमणीयता के साथ किया है।

उषा - अनिरुद्ध के बीच चित्रलेखा द्वारा आयोजित दूतकार्य, कामदेव - कृष्ण का हमला, अनिरुद्ध - बाणासुर का युद्ध, रति का विरह, उषा देवी का विरह, रति - प्रद्युम्न तथा उषा - अनिरुद्ध के विवाह आदि स्थानों पर चित्रित वर्णन अत्यंत सुंदर बन पडे हैं। इनमें वर्णित वस्तु केवल वर्णन के लिए ही रचे नहीं गये, बल्कि कनकदास द्वारा लोक को परखने की शक्ति इसमें स्पष्ट दिखाई देती है। समकालीन परिस्थितियों का चित्रण भी वे हमारे सामने लाकर खडा करते हैं।

'नल चरित्र' (नल की जीवनी) ''भामिनी शठपदी'' में रचित है। इसमें 9 संधियाँ, 480 पद हैं। महाभारत में वर्णित नलोपाख्यान ही इस

काव्य के लिए आधार है। यह काव्य छोटा होने पर भी सुन्दर है। चाहे राजा ही क्यों न हो, भाग्य के सामने झुककर अनेक कष्टों का सामना कर, अंत में शुभ परिणाम लाने वाली नल की कहानी कनकदास के हाथों अत्यंत रमणीयता के साथ चित्रित है। इतिवृत्त की अभिव्यक्ति पक्ष का कला कौशल इस काव्य के माधुर्य को दोगुना कर देता है।

'नल चरित्र' काव्य, वरपुर चेन्निग राज को अंकित किया गया है। नल और दमयंती की प्रेम कहानी पवित्र है। यह कहानी हंस के दूत कार्य से प्रारंभ होकर, नल दमयंती के पवित्र प्रेम परिणय के साथ समाप्त होता है। बीच में घटित विरह ताप की वेदना उनके पुनर्मिलन से समाप्त होता है। स्त्री - परुषों के आदर्श जीवन का चित्रण इसमें निहित है। इसके द्वारा दूत कर्म निभाने के कारण नल - दमयंती विवाह के बंधन में बंध गये हैं। देवता गण दमयंती को चाहते हैं, लेकिन दमयंती उन्हें नकार कर अपने को प्रेम करने वाले से विवाह करती है। इस प्रकार दमयंती धैर्यशाली नारी के रूप में प्रस्तुत होती है। इसी प्राकर 'हरिश्चंद्र' काव्य में जिस प्रकार हरिश्चन्द्र सत्य का प्रतीक बनता है, वैसे ही नल भी प्रेम का प्रतीक बनता है। हंस द्वारा दूत कर्म निभाने के कारण प्रेम विवाह करनेवाले दंपत्ति हैं नल - दमयंती।

नल को जुआ के प्रति अत्यधिक रुचि है यह एक प्रकार की बुरी आदत है। यह उसकी कमजोरी है। इन्द्र जैसे देवता को नकारकर नल से विवाह का समाचार पाकर, कलि पुरुष ने नल के इस कमजोरी का फायदा उठाकर नल के छोटे भाई पुष्कर से मिलकर, दोनों भाईयों के साथ जुआ खेला, नल को हराया और उसे जंगल भेज दिया। तब दमयंती अपने दोनों बच्चों को पिता के घर भेजकर स्वयं पति के साथ

जंगल चली जाती है। सोने के झूले में झूलनेवाली, फूलों की शय्या पर सोने वाली दमयंती को देखकर नल दुःखित होता है। जंगल में दो अति सुन्दर पक्षियाँ नल के वस्त्रों को उठाकर आसमान में उड जाती हैं। दिगंबर होकर शर्मिंदगी महसूस करने वाले नल को देखकर दमयंती अपनी साडी फ़ाडती है और आधा हिस्सा नल को पहनने के लिए देती है। दमयंती की दीन स्थिति को देखकर, नल दमयंती से कहता है कि वह अपने पिता के घर जाकर सुख से रहे। बहुत कुछ समझाने पर भी दमयंती नहीं मानती है। इस कारण आधी रात उसे अकेले छोडकर चला जाता है। इस तरह जंगल में जाते समय दावानल के बीच फँसी निस्सहाथ कर्कोटक साँप की रक्षा करता है। वह साँप उसके हाथ को ही डस लेती है। तुरंत उसका देह विकृत रूप धारण करता है।

दमयंती चेदी देश, और नल अयोध्या में प्रवेश करते हैं। नल ऋतुपर्ण राजा के पास बाहुक नाम से रथ सारथी बनकर रहने लगता है। दमयंती अपने पिता के पास चली जाती है। चतुराई से दमयंती नल के रहने के स्थान को जानकर उसको परोक्ष रूप से समाचार भिजवाती है कि दमयंती का द्वितीय स्वयंवर है। ऋतुपर्ण की इच्छा के अनुसार बाहुक अत्यंतवेग के साथ रथ चलाकर विदर्भ नगर ले आता है। मार्ग में नल की परीक्षा लेकर उसे पीडित करने वाला कलिपुरुष, इस समय उसे आशीर्वाद देकर चला जाता है। इस बीच दमयंती कुछ और परीक्षाएँ रखकर, बाहुक ही नल है इस बात का निश्चय कर उसकी रक्षा करने के लिए प्रार्थना करती है। नल का भ्रम दूर हो जाता है। पक्षियों का स्मरण करने पर वे उसके वस्त्रों को लाकर देतो हैं। जैसे ही नल उन वस्त्रों को धारण करता है उसका पहला रूप उसे प्राप्त हो जाता है। जब

सभी लोग आनंद से रहते हैं तभी नल पुष्कर को जुए में हराकर राज्य जीतकर पत्नी और बच्चों के संग धर्म बुद्धि के साथ राज्य पालन करने लगता है। यह नल की संक्षिप्त कथा है। इसमें कनकदास का कथा कौशल, वर्णन निपुणता, पात्रों के चारित्रिक विकास अत्यंत सुन्दर ढ़ंग से इस काव्य में अभिव्यक्त हुआ है। उसी प्रकार दमयंती को जब बीच रात जंगल में छोडते समय नल की मानसिक पीड़ा, बाहुक ही नल है ऐसा जानने पर भी पूरी सच्चाई जानने तक दमयंती की अकुलाहट पाठकों के मन को मुग्ध कर देती है। स्वयं कष्ट झेलने पर भी पत्नी की सुख की अपेक्षा करने वाले निस्वार्थ व्यक्ति के रूप में नल हमें इस काव्य में दर्शन देता है।

''श्री रमण सरसिज दळाक्षमु
रारि सचरा चरभरित दुरि
तारि नित्यानंद निर्जरनिकर दातार
बारि जांबक वरगुणाश्रय
मारपित वेदांतनुत सा
कार चेन्निगराय पालिसु जगके मंगळव''

इन चरणों के साथ आरंभ होने वाली नल की जीवनी ही काव्य है।

मेदिनियोळी पुण्य चरितेय
नादरिसि बारेदोदि केळुव
साधु सज्ज नरादवरिगहुदखिळ कैवल्य
वेद गोचर कृष्ण वरपुर
दादि केशवनमरवंदित
नादि नारायणनु सलहुवनखिळसज्जनरा''

जंगल चली जाती है। सोने के झूले में झूलनेवाली, फूलों की शय्या पर सोने वाली दमयंती को देखकर नल दु:खित होता है। जंगल में दो अति सुन्दर पक्षियाँ नल के वस्त्रों को उठाकर आसमान में उड जाती हैं। दिगंबर होकर शर्मिंदगी महसूस करने वाले नल को देखकर दमयंती अपनी साडी फ़ाडती है और आधा हिस्सा नल को पहनने के लिए देती है। दमयंती की दीन स्थिति को देखकर, नल दमयंती से कहता है कि वह अपने पिता के घर जाकर सुख से रहे। बहुत कुछ समझाने पर भी दमयंती नहीं मानती है। इस कारण आधी रात उसे अकेले छोडकर चला जाता है। इस तरह जंगल में जाते समय दावानल के बीच फँसी निस्सहाथ कर्कोटक साँप की रक्षा करता है। वह साँप उसके हाथ को ही डस लेती है। तुरंत उसका देह विकृत रूप धारण करता है।

दमयंती चेदी देश, और नल अयोध्या में प्रवेश करते हैं। नल ऋतुपर्ण राजा के पास बाहुक नाम से रथ सारथी बनकर रहने लगता है। दमयंती अपने पिता के पास चली जाती है। चतुराई से दमयंती नल के रहने के स्थान को जानकर उसको परोक्ष रूप से समाचार भिजवाती है कि दमयंती का द्वितीय स्वयंवर है। ऋतुपर्ण की इच्छा के अनुसार बाहुक अत्यंतवेग के साथ रथ चलाकर विदर्भ नगर ले आता है। मार्ग में नल की परीक्षा लेकर उसे पीडित करने वाला कलिपुरुष, इस समय उसे आशीर्वाद देकर चला जाता है। इस बीच दमयंती कुछ और परीक्षाएँ रखकर, बाहुक ही नल है इस बात का निश्चय कर उसकी रक्षा करने के लिए प्रार्थना करती है। नल का भ्रम दूर हो जाता है। पक्षियों का स्मरण करने पर वे उसके वस्त्रों को लाकर देतो हैं। जैसे ही नल उन वस्त्रों को धारण करता है उसका पहला रूप उसे प्राप्त हो जाता है। जब

सभी लोग आनंद से रहते हैं तभी नल पुष्कर को जुए में हराकर राज्य जीतकर पत्नी और बच्चों के संग धर्म बुद्धि के साथ राज्य पालन करने लगता है। यह नल की संक्षिप्त कथा है। इसमें कनकदास का कथा कौशल, वर्णन निपुणता, पात्रों के चारित्रिक विकास अत्यंत सुन्दर ढ़ंग से इस काव्य में अभिव्यक्त हुआ है। उसी प्रकार दमयंती को जब बीच रात जंगल में छोडते समय नल की मानसिक पीड़ा, बाहुक ही नल है ऐसा जानने पर भी पूरी सच्चाई जानने तक दमयंती की अकुलाहट पाठकों के मन को मुग्ध कर देती है। स्वयं कष्ट झेलने पर भी पत्नी की सुख की अपेक्षा करने वाले निस्वार्थ व्यक्ति के रूप में नल हमें इस काव्य में दर्शन देता है।

''श्री रमण सरसिज दळाक्षमु
रारि सचरा चरभरित दुरि
तारि नित्यानंद निर्जरनिकर दातार
बारि जांबक वरगुणाश्रय
मारपित वेदांतनुत सा
कार चेन्निगराय पालिसु जगके मंगळव''

इन चरणों के साथ आरंभ होने वाली नल की जीवनी ही काव्य है।

मेदिनियोळी पुण्य चरितेय
नादरिसि बारेदोदि केळुव
साधु सज्ज नरादवरिगहुदखिळ कैवल्य
वेद गोचर कृष्ण वरपुर
दादि केशवनमरवंदित
नादि नारायणनु सलहुवनखिळसज्जनरा''

इन चरणों के साथ गाथा समाप्त होती है। ''इस धरती पर इस पुण्य जीवनी को लिखने वाले, पढ़ने वाले, सुनने वाले साधु सज्जनों को मुक्ति की प्राप्ति होगी।'' इस प्रकार फलश्रुति भी कही गयी है।

भारतीय साहित्य के इतिहास में नलोपाख्यान अत्यंत प्राचीन है। भारतीयता को आद्यंत कायम रखने वाली अनोखी संपत्ति के रूप में इस काव्य को लिया जा सकता है।

'रामधान्य चरित्र' 'भामिनी षटपदी' में रचा गया है। तकरीबन 157 पदों में ''रामधान्य'' (मड़ुआ) अत्यंत चमतकृत शैली में वर्णित किया गया है। रामायण कथा से स्वीकृत की जाने वाला इतिवृत्त जैसे दिखने पर भी यह एक स्वतंत्र कल्पना से युक्त काव्य है। मड़ुआ और चावल, इन दोनों में मड़ुआ ही श्रेष्ठ है, यह स्पष्ट करना ही इस काव्य का मुख्य उद्देश्य है। आज के समय की तरह ही उस समय में भी समाज में लोग धणी गरीब लोगों के बीच के अंतर को अत्यंत अर्थपूर्ण, मार्मिकता के साथ और व्यंग्य परक दिखाया गया है। मड़ुआ और चावल इन दोनों के बीच संवाद शैली द्वारा पक्षपात रहित श्रीरामचन्द्र के चाल - चलन को स्पष्ट किया गया है। इस कहानी के लिए आधार कौन - सा है न जानने पर भी यह लोगों की धारणा है कि कनकदास ने उस समय की लोक कथा को आधार बनाकर ही इस काव्य को रचा होगा। सामाजिक चेतना इस काव्य में अत्यंत सुन्दर ढ़ंग से अभिव्यक्त हुई है। यह काव्य तात्विक रूप से भाव पटुता से युक्त काव्य है।

''श्री रमापति सिंधुशयन मु
रारि मुनिकुल पूजितांघ्रि स
रोरूहाक्ष सुदर्शनांकित देव भवदूरा

मारपित कौसल्यादेवि कु
मार रघुकुल राम नृप
वर देव चन्निगराय पालिसु सकल सज्जनरा
इन चरणों के साथ यह काव्य प्रारंभ होकर
सरधि शयन मुकुंद चरा
चरभरित निर्गुण निरामय
सुर नरोरगवंद्य वरपुरदादिकेशवना
चरण दंकितवागि पेळिद
परम धान्यद चरित संतत
धरयोळिं तोप्पिहुदु आचंद्रार्क परियंता''

इन चरणों के साथ समाप्त होता है। तेलुगु में पाल्कूरी सोमनाथ कृत 'द्विपद' के लिए जिस प्रकार से काव्य गौरव मिला है, उसी प्रकार कन्नड में भीम कवि जैसे कनकदास को भी 'भामिणी षटपती' के लिए काव्य गौरव का स्थान दिया गया है।

'हरि भक्ति सार' एक प्रकार से भक्ति भाव शतक ग्रन्थ कहा जा सकता है। यह 'भामिनी षटपदी' में रचा गया है। इसमें 110 पद्य हैं। नीति, भक्ति तथा वैराग्य की शिक्षा इस ग्रन्थ का प्रधान लक्ष्य है। कनकदास के तत्वज्ञान संबंधी जीवन आदर्श, लोक परक नीतियाँ अत्यंत सुलभ शैली में प्रतिपादित किये गये हैं।

भगवत भक्ति सार का विश्लेषण, वेदना युक्त विधाओं की अभिव्यक्ति इस ग्रंथ की विशेषता है। हरि ही सर्वोत्तम है इस बात का स्पष्टीकरण ''कमल संभव विनुत वासव नमित मंगळ चरित दुरित क्षमित राघव विश्वपूजित विश्व विश्वमय'' नामक चरणों में वे स्पष्ट करते हैं।

इन चरणों के साथ गाथा समाप्त होती है। ''इस धरती पर इस पुण्य जीवनी को लिखने वाले, पढ़ने वाले, सुनने वाले साधु सज्जनों को मुक्ति की प्राप्ति होगी।'' इस प्रकार फलश्रुति भी कही गयी है।

भारतीय साहित्य के इतिहास में नलोपाख्यान अत्यंत प्राचीन है। भारतीयता को आद्यंत कायम रखने वाली अनोखी संपत्ति के रूप में इस काव्य को लिया जा सकता है।

'रामधान्य चरित्र' 'भामिनी षटपदी' में रचा गया है। तकरीबन 157 पदों में ''रामधान्य'' (मडुआ) अत्यंत चमतकृत शैली में वर्णित किया गया है। रामायण कथा से स्वीकृत की जाने वाला इतिवृत्त जैसे दिखने पर भी यह एक स्वतंत्र कल्पना से युक्त काव्य है। मडुआ और चावल, इन दोनों में मडुआ ही श्रेष्ठ है, यह स्पष्ट करना ही इस काव्य का मुख्य उद्देश्य है। आज के समय की तरह ही उस समय में भी समाज में लोग धणी गरीब लोगों के बीच के अंतर को अत्यंत अर्थपूर्ण, मार्मिकता के साथ और व्यंग्य परक दिखाया गया है। मडुआ और चावल इन दोनों के बीच संवाद शैली द्वारा पक्षपात रहित श्रीरामचन्द्र के चाल - चलन को स्पष्ट किया गया है। इस कहानी के लिए आधार कौन - सा है न जानने पर भी यह लोगों की धारणा है कि कनकदास ने उस समय की लोक कथा को आधार बनाकर ही इस काव्य को रचा होगा। सामाजिक चेतना इस काव्य में अत्यंत सुन्दर ढ़ंग से अभिव्यक्त हुई है। यह काव्य तात्विक रूप से भाव पटुता से युक्त काव्य है।

''श्री रमापति सिंधुशयन मु
रारि मुनिकुल पूजितांघ्रि स
रोरूहाक्ष सुदर्शनांकित देव भवदूरा

मारपित कौसल्यादेवि कु
मार रघुकुल राम नृप
वर देव चन्निगराय पालिसु सकल सज्जनरा
इन चरणों के साथ यह काव्य प्रारंभ होकर
सरधि शयन मुकुंद चरा
चरभरित निर्गुण निरामय
सुर नरोरगवंद्य वरपुरदादिकेशवना
चरण दंकितवागि पेळिद
परम धान्यद चरित संतत
धरयोळिं तोप्पिहुदु आचंद्रार्क परियंता''

इन चरणों के साथ समाप्त होता है। तेलुगु में पाल्कूरी सोमनाथ कृत 'द्विपद' के लिए जिस प्रकार से काव्य गौरव मिला है, उसी प्रकार कन्नड में भीम कवि जैसे कनकदास को भी 'भामिणी षटपती' के लिए काव्य गौरव का स्थान दिया गया है।

'हरि भक्ति सार' एक प्रकार से भक्ति भाव शतक ग्रन्थ कहा जा सकता है। यह 'भामिनी षटपदी' में रचा गया है। इसमें 110 पद्य हैं। नीति, भक्ति तथा वैराग्य की शिक्षा इस ग्रन्थ का प्रधान लक्ष्य है। कनकदास के तत्वज्ञान संबंधी जीवन आदर्श, लोक परक नीतियाँ अत्यंत सुलभ शैली में प्रतिपादित किये गये हैं।

भगवत भक्ति सार का विश्लेषण, वेदना युक्त विधाओं की अभिव्यक्ति इस ग्रंथ की विशेषता है। हरि ही सर्वोत्तम है इस बात का स्पष्टीकरण ''कमल संभव विनुत वासव नमित मंगळ चरित दुरित क्षमित राघव विश्वपूजित विश्व विश्वमय'' नामक चरणों में वे स्पष्ट करते हैं।

वे कहते हैं कि भक्ति सार युक्त चरित्र को हरि भक्त लोग प्यार से स्वीकारने से ही इसकी रचना करेंगे। लगता है जैसे केवल यह भक्तों के लिए ही गाया गया है। मोक्ष के लिए राह दिखाती है कहते हुए इस कीर्तन का गान करते हैं।

''भक्तिसारपु चरितनु हरि
भक्तु लालिंचुनटलु रचिंतु
युक्तितो रचिंचि, चदिविनवारि इष्टार्थमुसिद्धिंचु
मुक्ति किदि दारि चूपु हरि
भक्तुलु दीनि नालिंपुडु निजमति
भक्तिनि प्रेमिंचु रक्षिंपुमम्मुल ननवरतमु''
(हरिभक्ति सारं, 18 पद)

इस प्रकार कनकदास सारी बातें स्पष्ट करते हैं। इस कृति को कनकदास भगवान आदिकेशव को अंकित करते हैं। इस कृति के हर एक पद्य के अंत में ''निरंतर हमारी रक्षा कीजिए'' इस प्रकार की प्रार्थना दिखाई देती है। कनकदास कहते हैं - हरि सर्वोत्तम हैं ''कमल संभव विनुत वासव नमित मेगळ चरित दुरित क्षमित राघव विश्वपूजित विश्व विश्वमया'', चरणों में यह बात स्पष्ट दृग्गोचर होती है।

''आकलि ग्रहिंचि तल्लि तन शिशुवुकु
अनुग्रहिंचि स्तन्यमिच्चिनटलु नीवु पो
षंपकुन्न मरेव्वरू पोषकुलै रक्षिंतुरु''
(ह. भ. सा. 23)

इसका भावार्थ है ''जिस प्रकार माँ अपने बच्चे की भूख जानकर अनुग्रह करती हुई अपना स्तन देती है ऐसे ही अगर तुम हमारा पालन

नहीं करोगे तो और कौन पालक बनकर हमारी रक्षा करेंगे।'' इस चरणों में आत्मा को अत्यंत रोचक ढ़ंग से दिखाया गया है।

''लक्ष्मी देवी कुल की सती है और कमलनाथ कुल के सुत हैं। बडी बहू शारदा है। बहन गिरिजा है और देवर शंकर है।.....'' (ह.भ.सा.25) इन पद्यों में ब्रह्म, रुद्रादि देवतागणों में श्रीहरि ही सर्वोन्नत हैं, कहकर हरि की प्रशंसा की।

''जब गर्भ में था तब किसने रक्षा की है? और बाद में विभिन्न कुयोनियों में जन्म लेकर अभी किसी पुण्य के कारण मैं ने मनुष्य का रूप धारण किया है। अब मुझे और थकाओ मत। पुनः संसार के बंधन में मत डालो। जो जन्म मैंने लिया है वह मामूली नहीं हैं। सभी इंद्रिय बुरे विषयों के पीछे पडे हुए हैं। काम, क्रोध से भरे हुए हैं। प्राप्त किये गये बुरे कर्मों के ढेर पडे हुए हैं। तुम्हारे बिना और कौन मेरा उद्धार करेंगे? त्वचा, रक्त, माँस, हड्डियों से मिलकर यह देह बना है। तुम्हारी कृपा जब तक है, तब तक ही इसे सम्मान दिया जाता है। जैसे ही तुमने हाथ छुड़ाया, वैसे ही इसे मिट्टी में मिला देते हैं। इस प्रकार के देह में किस प्रकार का पुरुषार्थ रहेगा?

स्नान, संध्या आदि सत्कार्य के आचरण केवल हीन जन्मों को दूर कर सकते हैं। केवल भक्ति सहकृत ज्ञान ही मुक्ति के लिए सोपान है। इसके लिए तुम्हारे अनुग्रह की आवश्यकता है। इस कारण मेरा हाथ छोडे बिना मेरी रक्षा करो। तुम्हारे अधीन यह संपूर्ण चराचर जगत समाहित है। ऐसे महान को भूलकर मैं इस नश्वर संसार में डूबा हुआ हूँ। मेरे कर्म, मेरा संसार ये सब बीज - वृक्ष न्याय की तरह हैं। इसका रहस्य केवल तुम ही जानते हो। इस कारण तुम ही मेरी रक्षा करो। तुम्हारे नाम स्मरण

वे कहते हैं कि भक्ति सार युक्त चरित्र को हरि भक्त लोग प्यार से स्वीकारने से ही इसकी रचना करेंगे। लगता है जैसे केवल यह भक्तों के लिए ही गाया गया है। मोक्ष के लिए राह दिखाती है कहते हुए इस कीर्तन का गान करते हैं।

''भक्तिसारपु चरितनु हरि
भक्तु लालिंचुनटलु रचिंतु
युक्तितो रचिंचि, चदिविनवारि इष्टार्थमुसिद्धिंचु
मुक्ति किदि दारि चूपु हरि
भक्तुलु दीनि नालिंपुडु निजमति
भक्तिनि प्रेमिंचु रक्षिंपुमम्मुल ननवरतमु''

(हरिभक्ति सारं, 18 पद)

इस प्रकार कनकदास सारी बातें स्पष्ट करते हैं। इस कृति को कनकदास भगवान आदिकेशव को अंकित करते हैं। इस कृति के हर एक पद्य के अंत में ''निरंतर हमारी रक्षा कीजिए'' इस प्रकार की प्रार्थना दिखाई देती है। कनकदास कहते हैं - हरि सर्वोत्तम हैं ''कमल संभव विनुत वासव नमित मेगळ चरित दुरित क्षमित राघव विश्वपूजित विश्व विश्वमया'', चरणों में यह बात स्पष्ट दृग्गोचर होती है।

''आकलि ग्रहिंचि तल्लि तन शिशुवुकु
अनुग्रहिंचि स्तन्यमिच्चिनटलु नीवु पो
षंपकुन्न मरेव्वरू पोषकुलै रक्षिंतुरु''

(ह. भ. सा. 23)

इसका भावार्थ है ''जिस प्रकार माँ अपने बच्चे की भूख जानकर अनुग्रह करती हुई अपना स्तन देती है ऐसे ही अगर तुम हमारा पालन

नहीं करोगे तो और कौन पालक बनकर हमारी रक्षा करेंगे।'' इस चरणों में आत्मा को अत्यंत रोचक ढ़ंग से दिखाया गया है।

''लक्ष्मी देवी कुल की सती है और कमलनाथ कुल के सुत हैं। बडी बहू शारदा है। बहन गिरिजा है और देवर शंकर है।.....'' (ह.भ.सा.25) इन पद्यों में ब्रह्म, रुद्रादि देवतागणों में श्रीहरि ही सर्वोन्नत हैं, कहकर हरि की प्रशंसा की।

''जब गर्भ में था तब किसने रक्षा की है? और बाद में विभिन्न कुयोनियों में जन्म लेकर अभी किसी पुण्य के कारण मैं ने मनुष्य का रूप धारण किया है। अब मुझे और थकाओ मत। पुनः संसार के बंधन में मत डालो। जो जन्म मैंने लिया है वह मामूली नहीं हैं। सभी इंद्रिय बुरे विषयों के पीछे पडे हुए हैं। काम, क्रोध से भरे हुए हैं। प्राप्त किये गये बुरे कर्मों के ढेर पडे हुए हैं। तुम्हारे बिना और कौन मेरा उद्धार करेंगे? त्वचा, रक्त, माँस, हड्डियों से मिलकर यह देह बना है। तुम्हारी कृपा जब तक है, तब तक ही इसे सम्मान दिया जाता है। जैसे ही तुमने हाथ छुड़ाया, वैसे ही इसे मिट्टी में मिला देते हैं। इस प्रकार के देह में किस प्रकार का पुरुषार्थ रहेगा?

स्नान, संध्या आदि सत्कार्य के आचरण केवल हीन जन्मों को दूर कर सकते हैं। केवल भक्ति सहकृत ज्ञान ही मुक्ति के लिए सोपान है। इसके लिए तुम्हारे अनुग्रह की आवश्यकता है। इस कारण मेरा हाथ छोडे बिना मेरी रक्षा करो। तुम्हारे अधीन यह संपूर्ण चराचर जगत समाहित है। ऐसे महान को भूलकर मैं इस नश्वर संसार में डूबा हुआ हूँ। मेरे कर्म, मेरा संसार ये सब बीज - वृक्ष न्याय की तरह हैं। इसका रहस्य केवल तुम ही जानते हो। इस कारण तुम ही मेरी रक्षा करो। तुम्हारे नाम स्मरण

का वरदान सदा मुझे दो। आखिर मुझे यही चाहिए। इस प्रकार जीवन के अल्पत्व को बतलाते हैं।[19]

'हरि भक्तिसार' में ''शरीर की नश्वरता को अत्यंत रोचक ढ़ंग से दिल को छूते हुए कनकदास ने वर्णन किया है।''

''ताळमु लेवियु लेनि ऊरिकि
तलुपुलु तोम्मिदि रेयिंबवलु
मूयक तेरचियुंडु जीवात्म तानुंडि
अन्नियुवदलि पारवेसि त्वरग
पोवुसमयमुन वीरू वारू
कागलरा नीवे रक्षिंचु मम्मुल ननवरतमु''

इसका सारांश है ''यह शरीर बिना ताले का नगर है। इस नगर में हमेशा दरवाजे खुले रहते (दो आँखे, दो कान, नाक के दो रन्ध्र, मुँह, गुह्यांग द्वार, उपसधा नामक नव द्वार) हैं। जब तक जीवात्मा है तब तक इस नगर पर अधिकार चलता है और नव द्वारों का काम चलता रहता है। जब प्राण छूट जाते हैं तब सभी द्वार एक दूसरे का अनुसरण कर जडवत बन जाते हैं। उस समय कोई भी सहायता नहीं कराते। इस शरीर को करोड यमदूतों के हाथों में पडने से पहले ही मेरी रक्षा करो।''

''दीनुड नेनु समस्तलोकमुनकु
दातवु नीवु विचारिंप मति
हीनुड नेनु महामहिम कैवल्यपतिवि नीवु
नाकेमि तेलियुनु नेनु मूढुडनु सु

[19] हरिभक्ति सारम्, पद्य - 56, 59,

ज्ञान मूरुतिवि नीवु नी स
मानुलुंदुरा देव'' **(ह. भ. सा. 49)**

इसका सारंश ''मैं अत्यंत दीन हूँ। तुम समस्त लोक के दाता, तुम विचार करके देखो, मैं अत्यंत मंद बुद्धि वाला हूँ और तुम महा महिमावान, कैवल्य दाता हो। मुझे क्या मालूम, मैं तो मूर्ख हूँ। तुम तो ज्ञान की मूर्ति हो। हे देव! तुम्हारी बराबरी क्या कोई कर सकता है?'' इस प्रकार घनीभूत दीनता से कनकदास उस हरि से प्रश्न कर रहे हैं।

''श्रीमदुत्सह देवनुत श्री
राम नीचरण सेवकुड
प्रेमतो साष्टांगपडि चेसेद विन्नपमु
ई महिलो नेटिदनुक मेमु सु
शेममु गलवारमु नी पदाब्ज
क्षेमवार्तनु तेलिसि रक्षिंपुमु'' **(ह. भ. सा. 16)**

इसका सारंश है ''हे श्रीराम! मैं तुम्हारा चरण सेवक हूँ। प्यार से साष्टांग नमस्कार कर एक विनती करता हूँ। आज तक हम सकुशल है। आपकी कुशलता का समाचार सुनाकर हमारी रक्षा कीजिए।'' इस प्रकार कनकदास अपनी कुशलता का समाचार श्रीहरी को बताकर उनकी कुशलता का समाचार पाने के साथ - साथ वे स्वयं उनके भक्त समूह के ही हैं कहकर अपना परिचय भी देते हैं। इसके द्वारा श्रीहरी के साथ आत्मीयता को बढाने में सफल हुए हैं।

''नूरू कन्यादानमुल भा
गीरथीस्नानमुनु हेच्चुगा चेतु

का वरदान सदा मुझे दो। आखिर मुझे यही चाहिए। इस प्रकार जीवन के अल्पत्व को बतलाते हैं।[19]

'हरि भक्तिसार' में ''शरीर की नश्वरता को अत्यंत रोचक ढ़ंग से दिल को छूते हुए कनकदास ने वर्णन किया है।''

''ताळमु लेवियु लेनि ऊरिकि
तलुपुलु तोम्मिदि रेयिंबवलु
मूयक तेरचियुंडु जीवात्म तानुंडि
अन्नियुवदलि पारवेसि त्वरग
पोवुसमयमुन वीरू वारू
कागलरा नीवे रक्षिंचु मम्मुल ननवरतमु''

इसका सारांश है ''यह शरीर बिना ताले का नगर है। इस नगर में हमेशा दरवाजे खुले रहते (दो आँखे, दो कान, नाक के दो रन्ध्र, मुँह, गुह्यांग द्वार, उपसधा नामक नव द्वार) हैं। जब तक जीवात्मा है तब तक इस नगर पर अधिकार चलता है और नव द्वारों का काम चलता रहता है। जब प्राण छूट जाते हैं तब सभी द्वार एक दूसरे का अनुसरण कर जडवत बन जाते हैं। उस समय कोई भी सहायता नहीं कराते। इस शरीर को करोड यमदूतों के हाथों में पडने से पहले ही मेरी रक्षा करो।''

''दीनुड नेनु समस्तलोकमुनकु
दातवु नीवु विचारिंप मति
हीनुड नेनु महामहिम कैवल्यपतिवि नीवु
नाकेमि तेलियुनु नेनु मूढुडनु सु

[19]हरिभक्ति सारम्, पद्य - 56, 59,

ज्ञान मूरुतिवि नीवु नी स
मानुलुंदुरा देव'' **(ह. भ. सा. 49)**

इसका सारंश ''मैं अत्यंत दीन हूँ। तुम समस्त लोक के दाता, तुम विचार करके देखो, मैं अत्यंत मंद बुद्धि वाला हूँ और तुम महा महिमावान, कैवल्य दाता हो। मुझे क्या मालूम, मैं तो मूर्ख हूँ। तुम तो ज्ञान की मूर्ति हो। हे देव! तुम्हारी बराबरी क्या कोई कर सकता है?'' इस प्रकार घनीभूत दीनता से कनकदास उस हरि से प्रश्न कर रहे हैं।

''श्रीमदुत्सह देवनुत श्री
राम नीचरण सेवकुड
प्रेमतो साष्टांगपडि चेसेद विन्नपमु
ई महिलो नेटिदनुक मेमु सु
शेममु गलवारमु नी पदाब्ज
क्षेमवार्तनु तेलिसि रक्षिंपुमु'' **(ह. भ. सा. 16)**

इसका सारंश है ''हे श्रीराम! मैं तुम्हारा चरण सेवक हूँ। प्यार से साष्टांग नमस्कार कर एक विनती करता हूँ। आज तक हम सकुशल है। आपकी कुशलता का समाचार सुनाकर हमारी रक्षा कीजिए।'' इस प्रकार कनकदास अपनी कुशलता का समाचार श्रीहरी को बताकर उनकी कुशलता का समाचार पाने के साथ - साथ वे स्वयं उनके भक्त समूह के ही हैं कहकर अपना परिचय भी देते हैं। इसके द्वारा श्रीहरी के साथ आत्मीयता को बढाने में सफल हुए हैं।

''नूरू कन्यादानमुल भा
गीरधीस्नानमुनु हेच्चुगा चेतु

लार गोवुल प्रीतितो भूसुरूल किच्चि
ऊरूल नूर ग्रहारमुल
धारयिच्चिनटुल फलमु चेयि
चेरूनु हरिभक्तसार कथाविन्नवारिकि''

(ह. भ. सा.106)

इस कृति को आदर के साथ सुनने वालों के लिए इस प्रकार की फलश्रुति सुनाई गयी है। कनकदास कहते हैं कि इस कीर्तन को सुनने वालों के लिए सौ कन्यादानों का फल, भागीरथी में स्नान करने का फ़ल, अधिक से अधिक गायों को प्रेम के साथ ब्राह्मणों को दान देने का फल, सौ नगरों को दान देने का फल इस 'हरि भक्ति सार' की कहानी को सुनने वालों को मिलेगा।' इस प्रकार की फलश्रुति को कनकदास ने सुनाया है। इस प्रकार कनकदास ने कीर्तन ही नहीं काव्यों को भी रचकर, हरिदास साहित्य में अपनी विशिष्टता को स्थापित किया है।

* * *

लार गोवुल प्रीतितो भूसुरूल किच्चि
ऊरूल नूर ग्रहारमुल
धारयिच्चिनटुल फलमु चेयि
चेरूनु हरिभक्तसार कथाविन्नवारिकि''

(ह. भ. सा.106)

इस कृति को आदर के साथ सुनने वालों के लिए इस प्रकार की फलश्रुति सुनाई गयी है। कनकदास कहते हैं कि इस कीर्तन को सुनने वालों के लिए सौ कन्यादानों का फल, भागीरथी में स्नान करने का फ़ल, अधिक से अधिक गायों को प्रेम के साथ ब्राह्मणों को दान देने का फल, सौ नगरों को दान देने का फल इस 'हरि भक्ति सार' की कहानी को सुनने वालों को मिलेगा।' इस प्रकार की फलश्रुति को कनकदास ने सुनाया है। इस प्रकार कनकदास ने कीर्तन ही नहीं काव्यों को भी रचकर, हरिदास साहित्य में अपनी विशिष्टता को स्थापित किया है।

* * *